CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि आचार्य दामोदर पंडित और उनकी कविता

डॉ. अशोक प्रभाकर कामत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आदरणीय अवस्थीजीको
सविनय समर्पित
अशोककान्त
२०।५।६६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि आचार्य दामोदर पण्डित और उनकी कविता

संपादक

डॉ. अशोक प्रभाकर कामत

एम्. ए., पीएच्. डी.

महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशक :

ग. वा. करमरकर,

सचिव, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा,
राष्ट्रभाषा-भवन, नारायण पेठ, पुणे ४११ ०३०

* * *

प्रथम संस्करण : १९७६ (प्रतियां १०००)

* * *

आवरण : एलोरा की गुफाओं में सीताहरण प्रसंग : चित्रकार : अनंत सालकर

* * *

प्रस्तुत ग्रंथ के मुद्रण के लिए महाराष्ट्र शासन की ओरसे रियायती मूल्य पर कागज दिया गया है।

* * *

मूल्य रु. १५–००

* * *

मुद्रक :

द. चि. परदेशी,

निलेश मुद्रणालय,
३१४ गंज पेठ, पुणे ४११ ००२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मेरे

अनिमित्त बंधु

डॉ. रामचंद्र चिंतामण ढेरे को

सविनय समर्पित

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

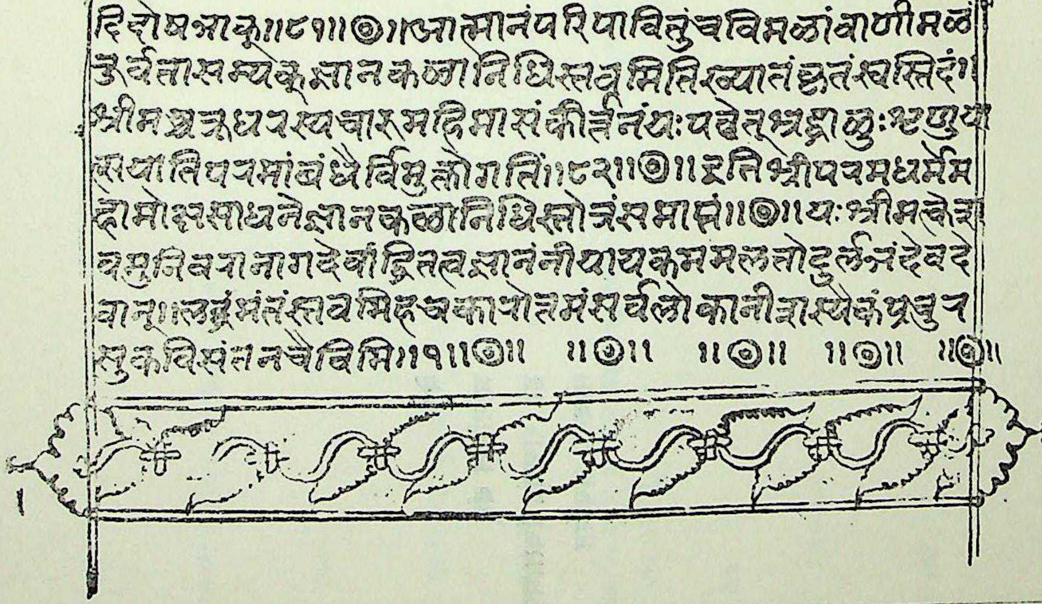
दिशोपआकु॥८१॥ ॥आत्मानं परिपावितुं च विमलां वाणीमळ
ुर्वत्तास्म्यकू ज्ञानकळानिधिस्सवृत्तिस्यातं ह्रतं स्वस्तिदं
श्रीमन्नऋधरस्यचारमहिमासंकीर्तनं यः पठेत् भ्रह्मा ळुः श्रुणुय
स्यातिपरमां च धैर्विमुक्तों गतिं ॥८२॥ ॥इति श्रीपरमधर्मम
ह्रामोक्षसाधने ज्ञानकळानिधिस्तोत्रं समाप्तं ॥ ॥ यः श्रीमन्वेद
वमुनिवना नागदेवांद्रितत्वज्ञानं नीयायकममलत्तोदुर्लभं देवदे
वानुग्रहं मंत्रं स्तवमिदं चकाधान्नमः सर्वलोकानीत्रास्येकं प्रभुत
सुकविसंतनचैविमि॥१॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

श्रीमान् डॉ. रा. चिं. ढेरे महोदय के निजी हस्तलेख संग्रहालय से प्राप्त 'सकळी' लिपि में
लिखित प्राचीन हस्तलेख का एक/नागरी पृष्ठ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रकाशकीय

सभा अपनी शक्तिनुसार महाराष्ट्र में न केवल हिंदी का प्रचार-प्रसार कर रही है बल्कि उसने कई अध्येताओं को अनुसंधान के लिए प्रेरित किया है। यही नहीं, सभा ने कई अहिंदी-भाषी विद्वानों के अनुसंधान-कार्यों का प्रकाशन भी किया है। डॉ. अशोक कामत युवा अध्येताओं में से एक हैं जो बहुत कम आयु में अपनी गंभीर अध्ययनशीलता और गवेषणा-शक्ति के लिए मान्यवर विद्वानों के प्रशंसा-पात्र बन गए हैं। उनकी 'आचार्य दामोदर पंडित और उनकी पदावली' शीर्षक पुस्तक विद्वानों की सेवा में प्रस्तुत करते हुए हमें बड़ी प्रसन्नता है।

सभा हिंदी के साथ-साथ मराठी की अभिवृद्धि और अनुसंधान के लिए भी प्रोत्साहन दे रही है और उसने कई मराठी पुस्तकें भी प्रकाशित की हैं। सभा की मान्यता है कि महाराष्ट्रीय विद्वानों का प्राचीन हिंदी काव्य, मराठी-भाषी लेखकों का हिंदी को योगदान जैसे कुछ विषय हैं जिनके अनुसंधान में मराठी-भाषी अध्येता अधिक गहराई से कार्य कर सकते हैं। डॉ. अशोक कामत हिंदी और मराठी के समान रूप से ज्ञाता होने के कारण वे संत नामदेव और दामोदर पंडित की रचनाओं पर पड़े हुए मराठी प्रभाव को अच्छी तरह स्पष्ट कर सके हैं।

आचार्य विनयमोहन शर्मा सबसे पहले मराठी संतों की हिंदी रचना प्रकाश में लाए। उन्होंने इस पुस्तक के बारे में लिखा है – "डॉ. कामत ने महाराष्ट्र में हिंदी के उदय और उत्थान की समस्या के संबंध में पर्याप्त शोध-कार्य किया है जिसे मान्यता मिली है। प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने महानुभावीय आचार्य दामोदर पंडित की हिंदी पदावली का संकलन किया है और उसपर विस्तृत भूमिका लिखी है। उसमें उन्होंने सिद्ध करने का प्रयास किया है कि हिंदी जगत में नामदेव को नहीं बल्कि दामोदर पंडित को प्रथम महाराष्ट्रीय हिंदी कवि होने का गौरव प्रदान करना चाहिए।" डॉ. भगीरथ मिश्र ने कहा है कि "यह महत्त्वपूर्ण गवेषणात्मक कार्य है जिसे साधकों का और विद्वानों का सहयोग प्राप्त होना चाहिए।"

श्रद्धेय आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र, आचार्य विनयमोहन शर्मा, डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, डॉ. पारसनाथ तिवारी जैसे उद्भट विद्वानों ने इस पुस्तक के संबंध में अपने अभिप्राय प्रकट किए हैं। इससे इस पुस्तक की आदिकालीन हिंदी साहित्य के इतिहास के अध्ययन में उपयोगिता स्पष्ट हो जाती है। हम इन विद्वानों के कृतज्ञ हैं।

राष्ट्रभाषा भवन,
नारायण पेठ, पुणे ४११ ०३०

ग. वा. करमरकर,
सचिव
महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपनी बात

आठ वर्ष पूर्व मैंने महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों के हिंदी काव्य का अध्ययन पूना विश्वविद्यालय की पीएच्. डी. उपाधि के शोध प्रबंध के हेतु आरंभ किया। इस कार्य के लिए मेरे निर्देशक तथा पूना विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्रपाठक डॉ. न. चि. जोगळेकरजी और मेरे मार्गदर्शक मित्र डॉ. रा. चि. ढेरेजी का निरंतर सहयोग और स्नेह प्राप्त हुआ।

इसी वर्ष मथुरा के जवाहर पुस्तकालय द्वारा मेरा शोध प्रबंध प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत पुस्तक मेरे शोध प्रबंध से संबद्ध है। महाराष्ट्र की प्राचीन हिंदी कविता-परम्परा और इस प्रदेश की नाथसंप्रदाय के आविर्भाव काल से तथा उसके प्रवर्तकों से दृढ संबद्धता स्पष्ट करने के हेतु मैंने अपने शोधग्रंथ में आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि आचार्य दामोदर पण्डित के जीवन-चरित्र तथा कार्य का परिचय एक स्वतंत्र अध्याय के रूप में प्रस्तुत किया था। उसी अध्याय का यह संशोधित एवम् परिवर्द्धित रूप है।

आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि होने का संमान चौदहवीं शती के संत नामदेव को दिया जाता रहा है। वस्तुतः आचार्य दामोदर पण्डित ने उनसे पूर्व हिंदी मिश्रित मराठी में और मराठी मिश्रित हिंदी में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की थीं। आदिकालीन हिंदी साहित्य के इतिहास में आचार्य दामोदर पण्डित तथा संत नामदेव दोनों का महत्त्व अनन्यसाधारण है।

पुस्तक के रचनाखण्ड में संकलित चर्यापदों का हस्तलेख सर्वप्रथम प्रकाशित करने का श्रेय हमारे अनुसंधायक मित्र डॉ. म. प. पेठे तथा श्री. वि. ग. पोंक्षे को प्राप्त है। उनको प्राप्त हस्तलेख यद्यपि बहुत प्राचीन नहीं हैं फिर भी वह पूर्ण होनेके कारण उसका महत्त्व अधिक है। पूना विश्वविद्यालय के जयकर ग्रंथालय में इन चर्यापदों का एक त्रुटित हस्तलेख उपलब्ध है, जिसका एक चित्र पुस्तक में दिया गया है। उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैद्राबाद के मराठी विभाग के प्रा. व. दा. कुलकर्णी ने अपने कुछ शोध-निबंधों के साथ आचार्य दामोदर पण्डित के चर्यापद

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दिये हैं। उनको प्राप्त पाठ पर्याप्त प्राचीन है और अर्थ लगाने की दृष्टिसे उपादेय भी है। परंतु उन्होंने अबतक पूर्ण हस्तलेख प्रकाशित नहीं किया। वस्तुतः आचार्य दामोदर पण्डित के चर्यापदों के हस्तलेख एकत्र कर पाठनिर्धारण करना बहुत आवश्यक है। आशा और विश्वास है कि हमें ऐसे कार्य के लिए विश्वविद्यालयों से सहयोग मिलेगा।

इस शोध-कार्य में राष्ट्रभाषा सभा के सचिव तथा मेरे शालेय अध्यापक श्री. ग. वा. करगरकर और सभा के सहसचिव तथा मेरे सन्मित्र श्री. मु. मा. जगताप ने स्नेहवश सहयोग दिया। उनके साथी श्री. मु. शं. देशपांडे तथा श्री. सेलिस्टिनो फर्नांडीस ने मित्रभाव से मेरी मदद की। मेरे स्नेहशील अध्यापक डॉ ग. न. साठे तथा सभा के ग्रंथपाल और हिंदी-मराठी के मर्मज्ञ अध्येता श्री. ब. का. विप्रदासजी ने पुस्तक पढ़कर अपनी उपयुक्त सूचनाओं से मुझे सजग किया। पुस्तक के लिए सूची बनाने का कार्य गरवारे महाविद्यालय की उप ग्रंथपाल सुश्री शशीकला भागवत ने किया है। पुस्तक के मुद्रितों का वाचन श्री. गोविंदराव केळकर ने किया। ये सारे मेरे स्वारस्वत परिवार के सुहृद्-जन हैं। मैं इनके स्नेहबंधन में रहना चाहता हूँ।

श्रद्धेय आचार्य पंडित परशुराम चतुर्वेदी, श्रद्धेय आचार्य विनयमोहन शर्मा, श्रद्धेय आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र, श्रद्धेय गुरुदेव डॉ. भगीरथ मिश्र, श्रद्धेय डॉ. भगवती प्रसाद सिंह, श्रद्धेय डॉ. विजयेंद्र स्नातक, श्रद्धेय डॉ. पारसनाथ तिवारी के आशीर्वचन एवम् अभिमत प्राप्त हुए। इन वंदनीय विद्वज्जनों का प्रोत्साहन ही मेरे कार्य के लिए प्रेरणा प्रदान करता रहा है। इसलिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

'रामनवमी' १९७६

'शिवश्री'

अशोक प्रभाकर कामत

२५८, सहजीवन वसाहत,
पर्वती, पूना ९.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अनुक्रम

विद्वज्जनों के आशीर्वाद।

१. महाराष्ट्र और हिंदी।

महानुभाव पंथ-संस्थापक महात्मा चक्रधर।

'लीळाचरित्र' ग्रंथ।

'लीळाचरित्र' के चर्यापद।

चौपदी : चतुष्पदी नहीं, चर्यापद।

विभिन्न प्रमाणों से परिपुष्टि।

गोरक्षगीतों का महाराष्ट्र में गायन।

साहित्य के इतिहास की प्राचीन सामग्री।

मराठी संतसाहित्य और हिंदी इतिहास ग्रंथ।

२. आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि दामोदर पण्डित।

दामोदर पण्डित : साम्प्रदायिक माहात्म्य।

दामोदर पण्डित : दीक्षा-काल।

"स्मृतिस्थळ" ग्रन्थ में उल्लिखित व्यक्तित्व-विशेष।

संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित!

मराठी एवम् हिंदी के प्रति प्रेम।

गायक रचनाकार।

दामोदर पण्डित का मराठी ग्रन्थ कर्तृत्व।

दामोदर पण्डित का निधन शक : कालचर्चा एवम् निष्कर्ष।

३. दामोदर पण्डित की हिंदी रचनाएँ।

दामोदर पण्डित की हिंदी रचनाओं का काल।

दामोदर पण्डित तथा संत नामदेव।

चौपदियों में वर्णित विषय का विवरण।

चौपदियों की भाषा : सामान्य विवेचन

चौपदियों की हिंदी भाषा का स्वरूप।

छंद विचार।

दार्शनिक विवेचन।

महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष।

४. रचना खण्ड-साठ चौपदियाँ।

उपसंहार

संदर्भ-ग्रंथ-सूची

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि
आचार्य दामोदर पण्डित
और हिंदी साहित्य का आदिकाल

विद्वज्जनों के आशीर्वाद
एवम् अभिमत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

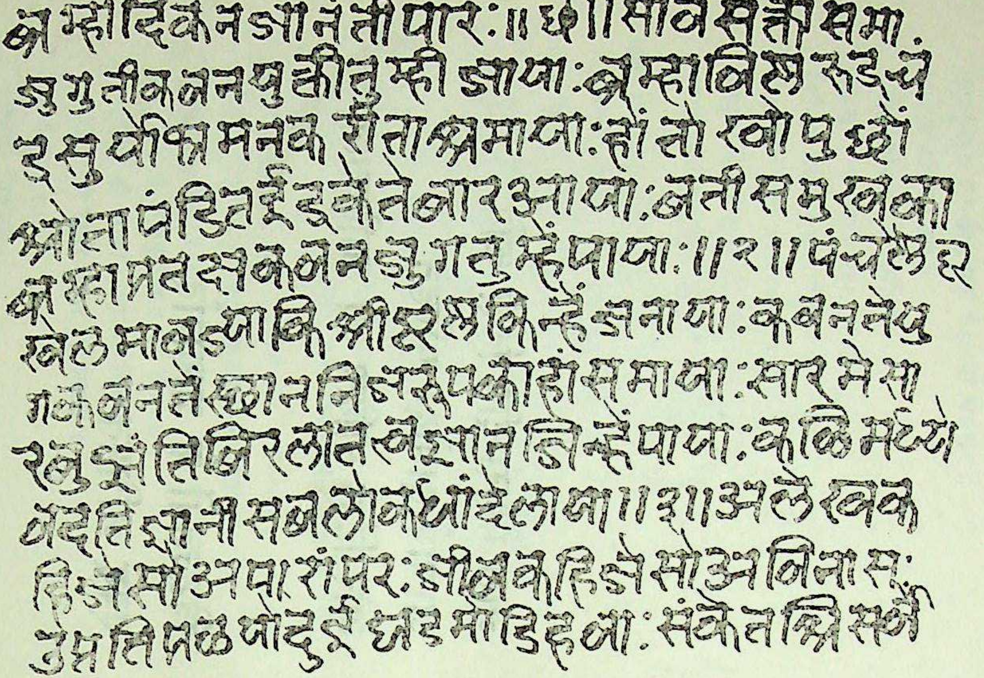

पूना विश्वविद्यालय के जयकर ग्रंथालय में प्राप्त चौपदियों के त्रुटित हस्तलेख का पृष्ठ। ग्रंथपाल श्री कृ. शं. हिंगवे तथा सन्मित्र प्रभाकर स्वामी की कृपा से प्राप्त।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आशीर्वाद

डॉ. अशोक प्रभाकर कामत के द्वारा प्रकाश में लाई गई "आचार्य दामोदर पण्डित और उनकी पदावली" शीर्षक पुस्तक को में अंशतः देख गया और यह मुझे, कुछ दृष्टियों के अनुसार, बहुत रोचक एवं महत्त्वपूर्ण भी जान पड़ी। इसके अंतर्गत एक ऐसे महानुभाव पंथी भक्त का सुंदर परिचय देने की चेष्टा की गयी है जिसने अपने जीवन काल (संभवतः तेरहवी ईसवी शती) में महाराष्ट्र की ओर उस दिनों प्रचलित मराठी प्रभावित हिंदी भाषा के माध्यम से इन्हें प्रस्तुत किया था तथा ऐसा करते समय, उसने बहुत कुछ उस रचना-शैली को भी अपनाया था, जिसके उदाहरण हमें, गुरु गोरक्षनाथ की उपलब्ध बानियों में भी मिला करते हैं। आचार्य दामोदर पण्डित उन दिनों नाथ पंथी नहीं थे, किंतु फिर भी उन्होंने वैसी रचनावली को भी प्रश्रय प्रदान किया था। अपनी प्रस्तुत रचनाओं के अंतर्गत वे यत्र तत्र नाथ पंथ से नितान्त भिन्न विचारधारा का पोषण करते हुए तक भी जान पड़ते हैं, जिसके आधार पर हमें ऐसा कोई अनुमान करने का भी अवसर मिल जाता है कि उन दिनों उस ओर उक्त प्रकार की रचना-शैली का विशेष प्रचार भी रहा होगा।

इस प्रसंग में यहाँपर यह भी उल्लेखनीय है कि प्रस्तुत पदावली में संग्रहीत रचनाओं की संज्ञा उपर्युक्त नाथ बानियों के स्थान पर "चौपदी" जैसी भी दीख पड़ती है जिस बात का समाधान डॉ. कामत ने यहाँपर इस प्रकार कर डालने की चेष्टा की है कि "यह शब्द चर्यापद का मराठी पर्याय रहा होगा" जो सिद्ध कवियों की उपलब्ध बानियों के लिए कभी पहले ही प्रयुक्त होता चला आया था। परंतु, इसमें भी संदेह नहीं कि ऐसी रचनाओं को "चौपदी" जैसे नाम के द्वारा अभिहित करने का कोई और भी कारण रहा होगा तथा उसके विषय में अभी कई अन्य बातों के ऊपर भी, विचार कर लेना आवश्यक समझा जा सकता है। हाँ, प्रस्तुत रचना-संग्रह को तबतक पदावली के रूप में पाकर उसका समुचित स्वागत करना भी अनुचित नहीं कहा जा सकता और, विशेषकर उस दशा में जब कि, इसमें प्रकाशित पंक्तियों की रचना-पद्धति प्रत्यक्षतः उन गोरख बानियों का अनुसरण करती हुई प्रतीत होती है जो सिद्धों वाले चर्यापदों के बहुत कुछ अनुरूप रची गई थी तथा उन्हें कभी "चौपदी" की परिभाषा में लाने की चेष्टा तक भी की गई नहीं दीख पड़ती है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रस्तुत पदावली की प्रस्तावना लिखते समय डॉ. कामत ने हमारा ध्यान इस बात की ओर भी आकृष्ट किया है कि आचार्य दामोदर पण्डित प्रसिद्ध हिंदी कवि संत नामदेव के समकालीन ठहरते हैं तथा इनकी इन रचनाओं का निर्माण काल भी उनकी उस पंजाब-यात्रा के पूर्व ही का समझा जा सकता है, जो उन्होंने, अपने जीवन के प्रायः अंतिम दिनों में की थीं। और इस प्रकार हम यह भी कह सकते हैं कि उनकी अपेक्षा हमें इन्हीं को महाराष्ट्र का "आद्य हिंदी कवि" होने का अधिक श्रेय देना होगा। वास्तव में यह बात उन दोनों कवियों की पृथक्-पृथक् रचनाओं के ऊपर पड़े हुए मराठी प्रभाव के आधार पर ही सिद्ध हो जाती है, जो संभवतः क्रमशः अधिक से कम होता चला गया होगा, तथा जिसकी प्रगति में संत नामदेव की उपर्युक्त भ्रमणशीलता के कारण बहुत कुछ सहायता तक भी अवश्य मिली होगी। जो भी हो इस रचना-संग्रह वाली रचनाओं को देखकर वैसे किसी क्रमिक विकास की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी का उपयुक्त उदाहरण भी बिना मिले नहीं रहता।

डॉ. अशोक कामत के द्वारा संपादित की गई यह पदावली सर्वथा सुंदर एव उपादेय है और मुझे पूर्ण विश्वास है कि, हिंदी साहित्य के प्रेमी पाठकों द्वारा इसका यथेष्ट स्वागत किया जाएगा।

बलिया
२५–४–७६

आचार्य परशुराम चतुर्वेदी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दो शब्द

भारत बहुत बड़ा देश है। फिर भी सहस्राब्दियों से इसकी सांस्कृतिक एकता अक्षुण्ण चली आ रही है। आचार-विचार की सार्वदेशिक एकता का संघटन करते थे महात्मा, संत और कविजन और उनकी अभिव्यक्ति की वाणी होती थी भारती। आरंभ में माध्यम का कार्य किया अमरभारती ने। फिर प्राकृत ने, महाराष्ट्री प्राकृत ने। और अंत में सामने आई 'भारई' (भारती) देशी भाषा हिंदी। यह स्थिति सारे भारत की है। भारत का पूर्वी, पश्चिमी, उत्तरी या दक्षिणी कोई ऐसा अंचल नहीं है जहाँ अतीत में इस भाषा का व्यवहार सार्वदेशिक, सांस्कृतिक प्रयोजन से न होता रहा हो। कहीं कहीं तो हिंदी का पुराना नाम भी मिल जाता है– ब्रजबुली, ग्वालेरी आदि। किंतु हिंदी भाषा और साहित्य के इतिहास पर काम करनेवालों के हाथ यह सारी सामग्री इसलिए नहीं आती कि वह हस्तलिखित रूप में उस अंचल की भाषा से संपृक्त वेष्ठनों में आवृत पड़ी हुई है। हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन धीरे-धीरे ज्यों ज्यों उन उन अंचलों के अनुसंधित्सु कर रहे हैं त्यों त्यों प्रभूत और प्राचीन सामग्री ही नहीं, उपलब्धि की दृष्टि से सर्वथा नवीन भी प्राप्त होती जा रही है। यदि ऐसी सारी सामग्री परिश्रमपूर्वक एकत्र हो जाए तो निश्चय ही हिंदी भाषा और साहित्य के इतिहास का कायापलट होकर रहेगा।

डॉ. अशोक प्रभाकर कामत महाराष्ट्र के अतीत की हिंदी भाषा और साहित्य संबंधी सामग्री का संचयन करने में दत्तचित्त हैं। उन्होंने इधर "आचार्य दामोदर पण्डित और उनकी पदावली," खोज निकाली है, जो उनके अनुसार नामदेव से भी पूर्ववर्ती है। साथ ही उससे यह भी संकेत मिलता है कि केवल सूरदास, तुलसीदास ने ही नाथपंथी या निर्गुण-धारा का विरोध आगे चलकर नहीं किया प्रत्युत् इसका विरोधी स्वर आचार्य दामोदर पण्डित के समय में अर्थात् विक्रम की चौदहवीं शताब्दी के आरंभी में ही मुखर हो गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि ज्ञानकनिष्ठों और गृहस्थों के लिए विराग मार्ग की संन्यस्तों वाली धारा बहुत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

पहले से ही समुपयोगी नहीं समझी गई । जागतिक राग को ही भागवत राजमार्ग में परिणत करके भाव या महाभाव की साधना का सरल मार्ग या राजमार्ग निकाल लिया गया था ।

डॉ. अशोक कामत बहुत ही परिश्रमी, मनीषी, शोधदृष्टिसंपन्न एवम् विवेकशील अनुसंधित्सु हैं । मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस प्रकार के शोध में दत्तचित्त रहकर वे अभूतपूर्व सारस्वत सेवा करेंगे और अन्यों को भी उसकी ओर आकृष्ट करेंगे । उनके अन्वेषण का सर्वत्र स्वागत होगा, यह कहने की अपेक्षा ही नहीं है । मैं उनका साधुवाद करता हूँ ।

आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र
भूतपूर्व प्रोफेसर, नवीन शोधपीठ
तथा अध्यक्ष, स्नातकोत्तर विभाग,
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

प्रशस्ति

डॉ. अशोक कामत एक अनुसंधानप्राय विद्वान् हैं। उन्होंने महाराष्ट्र में हिंदी के उदय और उत्थान की समस्या में पर्याप्त शोध-कार्य किया है जिसे पर्याप्त मान्यता भी मिली है। प्रस्तुत पुस्तक में उन्होंने महानुभावी आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी पदावली का संकलन किया है और उस पर विस्तृत भूमिका लिखी है। इसमें उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि हिंदी-जगत् में नामदेव को प्रथम महाराष्ट्रीय हिंदी कवि का जो स्थान दिया जाने लगा है वह उचित नहीं है, यह स्थान आचार्य दामोदर पण्डित को मिलना चाहिए। यद्यपि दोनों समकालीन थे फिर भी आचार्य पण्डित ने हिंदी में रचना, नामदेव से पूर्व की थी। वे लिखते हैं– "आचार्य दामोदर पण्डित का हिन्दी-साहित्य के आविर्भाव काल में अपना विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। नाथसम्प्रदाय में दीक्षित वारकरी संत नामदेव तथा आचार्य दामोदर पण्डित के काल में विशेष अंतर न होने पर भी उनके हिंदी-रचना-काल में अंतर है। शक् १२५४ के पूर्व संत नामदेव पंजाब में नहीं पहुँचे और उनकी प्राप्त रचनाएँ शक् १२५४ के अनंतर रची हुई मिलती हैं और आचार्य पण्डित की हिंदी वाणी निश्चय ही शक् १२३४ पूर्व की रची मिलती है।" हमारा मत है कि दक्षिणापथ में हिंदी का प्रवेश मध्यदेशीय आर्यों के संचार के साथ ही हो गया था। आर्यों की बस्ती ज्यों-ज्यों दक्षिण की ओर बढ़ती गई त्यों त्यों उनकी भाषा का भी संचार होता गया। पर जहाँ सुदूर दक्षिण की स्थानीय भाषाएँ आर्य भाषाओं से केवल प्रभावित ही हुई, वहाँ महाराष्ट्र में उन्होंने वहाँ की मूल बोलियों को आत्मसात कर लिया, इसका कारण यह प्रतीत होता है कि यहाँ आर्यों की बस्ती अधिक शक्तिशाली रही है और उनका संपर्क उत्तरवासी आर्य बंधुओं से बराबर होता रहा है। अतः परस्पर व्यवहार में वे समय-समय पर महाराष्ट्रीय, शौरसेनी, अर्धमागधी, मागधी, प्राकृतों और अपभ्रंशों का प्रयोग करते रहे हैं। इसके प्रमाण हमें संस्कृत नाटकों और शास्त्र-ग्रंथों में मिलते हैं। आर्य अपनी सांस्कृतिक एकता अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए सदैव सतर्क रहे हैं। सुदूर दक्षिण प्रदेशों की आर्येतर जनता भी उत्तराखंड से संपर्क बनाने की दृष्टि से वह

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की मूल भाषा (मध्य देश की भाषा) का संपर्क-भाषा के रूप में व्यवहार करती रही है। डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी के मत से "पश्चिमी अपभ्रंश एक महान साहित्यिक भाषा के रूप में ठेठ महाराष्ट्र से बंगाल तक प्रचलित थी।" अपभ्रंश के बाद उसका स्थान व्रजभाषा ने ले लिया। महाराष्ट्र तथा अन्य प्रदेशों में संतों और कवियों ने अपनी मातृभाषा के साथ-साथ व्रज को भी अपनाया और उसके पश्चात् उसमें खड़ी बोली का पुट भी दिया। उत्तर भारत में विक्रम की आठवीं शताब्दी में रचित सिद्धों की प्राकृताभास–हिंदी में रचनाएँ उपलब्ध हैं। दक्षिण में भी अपभ्रंश से क्रमशः हिंदी का विकास हो रहा था। राष्ट्रकूट शासकों के काल में मान्य–खेट साहित्यिक केन्द्र था। ९७३ ई. तक इस राज्य की समृद्धि होती रही और जैन-धर्म तथा प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य की भी अभिवृद्धि होती रही। यहीं पुष्पदेत के अजयकुमार चरयु का सन ९६५ से ९७१ के मध्य निर्माण हुआ। उसकी भाषा में हिंदी का प्रारम्भिक रूप मिलता है।

यथा–सो हय जल हर सुरधनु छायए। सो हइ मागसू गुण संपत्तिए।।

विक्रम सं. १२२४ में महाराष्ट्र के चालुक्य राजा सोमेश्वर का ज्ञानकोश "अभिलषित-चिंतामणि" प्रकाश में आया था। उसमें देश भाषाओं की राग-रागिनियों के उदाहरण दिए गए हैं। उसमें व्रज मिश्रित हिंदी का भी बीजारोपण हो गया था। यदि ऐसा न होता तो नाथपंथियों की वाणी महाराष्ट्र में कैसे ग्रहण हो पाती ?

इसमें संदेह नहीं कि महानुभाव पंथियों ने सधुक्कडी हिंदी में नामदेव से पूर्व लिखना प्रारंभ कर दिया था पर उनकी भाषा में वह निखार, वह काव्य-सुषमा दर्शित नहीं होती जो नामदेव के हिंदी पदों में है। इसलिए हमने काव्य-गुण और भाषा परिष्कार की दृष्टि से नामदेव को आदि हिंदी निर्गुणी संत कवि कहा है। दामोदर पण्डित के पदों की भाषा में हिंदीपन है और क्योंकि उनका उपयोग धार्मिक वाद-विवाद के लिए किया गया है इसलिए वे काव्य-चमत्कृति से रहित हैं। आचार्य का लक्ष्य भी काव्य रचना नहीं था। महानुभावी कवयित्री महदाइसा का जो पद हमें प्राप्त हुआ है उसकी भाषा अधिक स्वच्छ है और उसमें काव्य की झलक भी है। यदि इस कवयित्री के अधिक पद प्राप्त हो सकें तो वे हिंदी की आद्य कवयित्री स्वीकार की जा सकती है। ऐसी दशा में जहाँ आदिकालीन हिंदी साहित्य के अंतर्गत धार्मिक तर्क–वितर्कमयी अपभ्रंशाभास सिद्धों और नाथों की

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

हिंदी वाणियों को स्थान दिया गया है वहाँ महानुभावी संत कवयित्री तथा आचार्य दामोदर पण्डित की रचनाओं को भी स्थान मिलना चाहिए। हिंदी भाषा के विकास की दृष्टि से महानुभावी संतों के कर्तृत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

डॉ. कामत ने अपनी प्रस्तुत पुस्तक में आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी–आभासी चौपदियों को एकत्र कर उनकी भाषा, छंद आदि की दृष्टि से वैदुष्यपूर्ण समीक्षा कर हिंदी-साहित्य के भावी इतिहासकारों को दुर्लभ सामग्री प्रदान कर दी है। प्राचीन पद्य-साहित्य प्रायः राग-रागिनियों में निबद्ध है। दामोदर पण्डित की चौपदियाँ भी विभिन्न राग-रागिनियों में हैं। डॉ. कामत ने चौपदियों के कुछ अप्रचिलित शब्दों का पाद-टिप्पणियों में अर्थ दे दिया है, जिससे उन्हें समझने में आसानी हो जाती है। अंत में हम इस शोध-सामग्री को प्रकाश में लाने के लिए डॉ. कामत को हृदय से धन्यवाद देते हैं। आशा है, इस कृति का हिंदी के शोध क्षेत्र में स्वागत होगा।

आचार्य विनयमोहन शर्मा

भूतपूर्व निदेशक,
अनुसंधान विभाग,
भोपाल विश्वविद्यालय, भोपाल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

भूमिका

महानुभाव पंथ के प्रमुख विचारक और व्याख्याता आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी पदावली को प्रकाशित होते देख कर मेरे मन में सहज ही प्रसन्नता हो रही है। जिस समय मैं पूना में था मैंने प्रयत्न करके संत नामदेव की हिंदी पदावली प्रकाशित करायी थी। संत नामदेव की हिंदी-पदावली से विद्वानों का पहले भी परिचय था और गुरुग्रंथसाहब में नामदेव के अड़सठ पदों का संग्रह भी मिलता है। नामदेव की पदावली से ऐसा लगता था कि गोरखवाणी के पश्चात् संत काव्य परंपरा में सबसे पहले नामदेव की हिंदी रचनाएँ ही आती हैं। उनका समय तेरहवीं शती विक्रमीय सिद्ध होता है। नामदेव की पदावली पर गोरखनाथ के विचारों का प्रभाव परिलक्षित होता है, जो संभवत: संत ज्ञानेश्वर और विसोबा खेचर के सम्पर्क के परिणाम स्वरूप उनमें आया होगा। आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी पदावली को देखने से ऐसा लगता है कि इनकी रचना या तो नामदेव के समकालीन चलती रही या उससे कुछ पूर्व इनकी रचना हुई। आचार्य दामोदर पण्डित नामदेव के समकालीन थे, और निश्चित रूप से उस समय महाराष्ट्र में नाथ सम्प्रदाय का प्रभाव था। यह प्रभाव समकालीन वैष्णव, शैव और शाक्त सम्प्रदायों पर बड़े व्यापक रूप से पड़ रहा था। इसी कारण वारकरी सम्प्रदाय के नामदेव और महानुभाव सम्प्रदाय के आचार्य दामोदर पण्डित की रचनाओं में भी वह स्पष्ट दिखाई देता है। नाथ सम्प्रदाय का प्रसार उत्तर में हिमालय के तटवर्ती क्षेत्रों से लेकर दक्षिण तक व्याप्त हो रहा था और इस सम्प्रदाय की विचारधारा और साधना के प्रचार-प्रसार का माध्यम या तो संस्कृत भाषा थी या हिंदी भाषा। ये दोनों ही भाषाएँ उस समय सांस्कृतिक प्रचार के क्षेत्र में राष्ट्रभाषा के रूप में काम कर रही थीं। दार्शनिक शास्त्र चर्चा का माध्यम संस्कृत थी और साधना और अनुभूति के विचार का माध्यम हिंदी भाषा थी। इसीलिए अन्य प्रादेशिक भाषाओं में रचना करने वाले संत-महात्मा भी जब व्यापक क्षेत्र में अपने विचारों और साधना का प्रचार करना चाहते थे तो वे संस्कृत अथवा हिंदी भाषा का व्यवहार करते थे। उस समय लोक में प्रचार का माध्यम हिंदी ही थी। यही कारण है कि मराठी और गुजराती में अपने विशिष्ट धर्म-सम्प्रदायों की बातों को लिखने वाले संत और भक्त लोग जब अपने क्षेत्र के बाहर निकलते थे तो उनके विचारों का प्रचार हिंदी के माध्यम से ही होता था। संत नामदेव, नरसी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मेहता और आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी रचनाएँ इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। इन लोगों ने अपने अधिकांश मूल सम्प्रदायगत विचार और उपदेश मराठी और गुजराती भाषाओं में दिए पर जब अपने क्षेत्र से बाहर मध्यप्रदेश, राजस्थान, पंजाब आदि में इनके प्रचार का अवसर आया अथवा इनकी शिष्य मंडली में अन्य भाषा-भाषी सम्मिलित हुए, तो इन्होंने उसका रूप प्रचलित हिंदी कर दिया जो पूर्ववर्ती नाथ सम्प्रदाय के उपदेशों की भाषा थी।

आचार्य दामोदर पण्डित महानुभाव पंथ के प्रवर्तक महात्मा चक्रधरस्वामी के प्रशिष्य और नागदेवाचार्य के शिष्य थे। आचार्य दामोदर पण्डित ने संस्कृत, मराठी और हिंदी तीनों भाषाओं में लिखा है। अधिकांश इनकी रचनाएँ मराठी में प्राप्त होती है। इनकी हिंदी रचनाएँ चौपदियों के रूप में हैं। ये चौपदियाँ "चर्यापद" का रूप हैं, चतुष्पदी का नहीं। प्रस्तुत संग्रह में चौपदियाँ सात प्रकरणों में से संकलित की गयी हैं। ये चौपदियाँ स्मृत रूप में हैं और इनके पढ़ने से ऐसा ज्ञात होता है कि इनमें से अधिकांश इनके गुरु नागदेवाचार्य के द्वारा दिये गए उपदेशों और अनुभवों का स्मृत स्वरूप है। यदि हम गोरखबानी और नाथ-सिद्धों की बानी का अवलोकन करें तो हमें लगता है कि उसी शैली और लय-पद्धति का आधार लेकर आचार्य दामोदर पण्डित की भी रचनाएँ हुई हैं जिस पर गोरखनाथ तथा अन्य नाथसिद्धों की वाणियाँ लिखी गई हैं। इसके साथ ही साथ गोरखवाणी में प्राप्त वार्तालाप और संवाद शैली भी इन चौपदियों में अपनायी गयी है। इसके कथ्य की दृष्टि से मूल अंतर इस बात में दिखाई देता है कि आचार्य दामोदर पण्डित की रचनाओं में शास्त्र सम्मत दार्शनिक विवेचन अधिक है तथा गोरख और नाथ-सिद्धों की वाणी में योग-साधना और साधनागत निजी अनुभवों का प्राधान्य है। इसी अंतर को हम चाहें तो सम्प्रदायगत अंतर कह सकते हैं। यों शैव तंत्र सम्प्रदायों के अनेक रूप दृष्टिगत होते हैं। नाथ सम्प्रदाय भी उनमें से एक योग-प्रधान साधना सम्प्रदाय है जिसका कि दसवीं से लेकर सोलहवीं शताब्दी तक भारतीय साधना पर बहुत व्यापक प्रभाव रहा। हो सकता है कि महानुभाव पंथ में भी उसका समावेश हुआ हो जो आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी रचनाओं के बीच प्रतिभासित होता है।

नाथ सम्प्रदाय बाह्य आडंबर-शून्य अनुशासनबद्ध, योगपरक, व्यापक अध्यात्म साधना का सम्प्रदाय था, जिसमें व्यक्ति अपना आध्यात्मिक व्यक्तित्त्व और बल विकसित करता था। उसमें संसार के परावलंबित बनानेवाले साधनों और जीवन के उपकरणों के प्रति चुनौती थी कि जिनमें मनुष्य बँधकर रह जाता है। वह एक निर्बन्धमुक्त साधना का सम्प्रदाय था, और उसकी मूल विशेषताएँ कुछ ऐसी थीं जो विविध रूपों में विकसित परवर्ती धार्मिक सम्प्रदायों में प्रायः

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सभी में कुछ न कुछ पायी जाती हैं। साधन रूप शरीर की पवित्रता, स्वस्थता और अशांतता को आधार बनाकर चेतना के चरम विकास और उनके आनंदानुभव का ग्रहण इस सम्प्रदाय के योगियों का लक्ष्य था। इस सम्प्रदाय के अनेक योगियों ने अवधूत स्थिति को प्राप्त कर मोक्षानुभूति की और महाभारतकार के इस चारु वाक्य को सत्य सिद्ध किया,

नास्ति सांख्य समं ज्ञानम्। नास्ति योग समं बलम् ॥

यही कारण है कि नाथ सम्प्रदाय के योगीश्वरों के व्यक्तित्वों और विलक्षण चमत्कारी कार्य-कलापों से प्रभावित होकर अनेक धर्म सम्प्रदायों में उसकी विशेषताओं और तत्त्वों का समावेश हुआ। हमारे लिए यह एक गवेषणा का विषय है कि हम मध्ययुग के धार्मिक साहित्य के अंतर्गत उन तत्त्वों की खोज करें और यह देखें कि सम्प्रदायों में जाकर उनकी क्या परिणति हुई है। इस कार्य के करने के पूर्व समस्त धार्मिक साहित्य और संत-महात्माओं की वाणियों का प्रकाशन आवश्यक है। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मेरे प्रिय शिष्य डॉ. अशोक कामत इस दिशा में महत्त्वपूर्ण गवेषणात्मक कार्य कर रहे हैं। मैं उनके कार्य में सतत सफलता की शुभकामनाएँ देता हूँ। मेरा आशीष उनके साथ है। आशा है उन्हें साधकों, संतों और विद्वानों का सहयोग प्राप्त होगा।

रामनवमी, १९७६
सागर।

डॉ. भगीरथ मिश्र
आचार्य एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग
सागर विश्वविद्यालय, सागर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभिमत

महाराष्ट्र के संतों ने हिंदी भाषा को जिस भाव से स्वीकार किया वह राष्ट्रीय भावात्मक एकता का नैसर्गिक रूप था। महाराष्ट्र की अपनी समृद्ध भाषा मराठी और उसका समृद्ध साहित्य इन संतों की दृष्टि से ओझल नहीं था। किन्तु हिंदी को स्वीकार करने में जिस विशेष अभिप्राय को इन्होंने सामने रखा वह राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत है। जिन विद्वानों ने महाराष्ट्र के संतों की हिंदी सेवा के विषय में अनुसंधान किया है उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया है, महाराष्ट्र में हिंदी और मराठी समानान्तर रूप से चलती रहीं। उपदेश की भाषा मराठी होने पर भी प्रचार-प्रसार की व्यापकता से लिए उन्हीं संतों और महानुभावों ने हिंदी को भी स्वीकार किया।

डॉ. श्री अशोक कामत ने "महाराष्ट्र और हिंदी" शीर्षक लघु पुस्तिका में अनुसंधानपूर्वक यह सिद्ध किया है कि हिन्दी-मिश्रित भाषा का प्रयोग तो तेरहवीं शताब्दी से ही महाराष्ट्र में मिलता है। महानुभाव पंथ के संस्थापक चक्रधरस्वामी का जीवन-चरित्र उनके शिष्यों ने "लीळाचरित्र" नाम से लिखा जिसमें हिंदी के प्रयोग लक्षित किये जा सकते हैं। भाषा में मराठी की मूल प्रकृति होने पर भी हिंदी शब्दों और क्रियापदों का प्रयोग पाकर आश्चर्य होता है उस समय हिंदी का प्रसार था। मराठी का प्राचीन भक्ति-काव्य प्रमुख सम्प्रदायों में है। इन सभी में मराठी के साथ हिंदी प्रयोग पाए जाते हैं।

हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में नामदेव को हिंदी का प्रथम मराठी भक्त कवि लिखा गया है। श्री कामत का यह मत है कि नामदेव से पूर्व आचार्य दामोदर पण्डित को हिंदी भक्त कवि का स्थान मिलना चाहिए। आचार्य दामोदर पण्डित की रचनाओं में हिंदी प्रभाव का अनुसंधान करते हुए श्री कामत ने कुछ उद्धरण भी दिये हैं। आचार्य दामोदर पण्डित की रचनाओं के अध्ययन से लेखक ने सप्रमाण यह सिद्ध किया है कि महाराष्ट्र के संतों में इन्हीं को आद्य हिंदी कवि मानना चाहिए।

लेखक की दूसरी स्थापना है कि आचार्य दामोदर पण्डित ही पहले रचनाकार हैं जिनपर उत्तर प्रदेश में प्रचलित व्रजभाषा हिंदी के संस्कार पड़े थे और

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उन्होंने व्रज तथा खड़ी बोली मिश्रित हिंदी को महाराष्ट्र में सर्वप्रथम प्रचलित किया था।

इस लघु पुस्तिका में आचार्य दामोदर पण्डित विरचित चौपदियाँ भी संकलित हैं। इन्हें चर्यापद भी कहा जाता है। बौद्ध मत या नाथपंथ के प्रभाव से इन्हें संभवत: यह नाम मिला हो। वैसे आचार्य दामोदर पण्डित के प्रारम्भिक जीवन में नाथपंथ का प्रभाव भी लेखक ने खोज़ा है। रचना खण्ड के पदों का अनुशीलन अनुसंधान का विषय है। भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से इन रचनाओं का अध्ययन हिंदी साहित्य के इतिहास में नवीन शोध का द्वार खोलता है।

डॉ. श्री अशोक कामत साधुवाद के पात्र हैं – उन्होंने बड़े गहन अध्ययन और अध्यवसायपूर्वक यह शोध-पत्र तैयार किया है। इस दिशा में अभी और कार्य की आवश्यकता है। महाराष्ट्र के संतों के भाषाविषयक अवदान का शोध की वैज्ञानिक प्रक्रिया से अध्ययन होने पर और भी तथ्य प्रकाश में आ सकते हैं। उनसे भावात्मक राष्ट्रीय एकता की शृंखला दृढ़ होगी।

डॉ. विजयेन्द्र स्नातक
आचार्य तथा अध्यक्ष,
हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अभिप्राय

महाराष्ट्र के संत कवियों में सर्वप्रथम हिंदी रचनाएँ प्रस्तुत करने का श्रेय अब तक वारकरी सम्प्रदाय के प्रसिद्ध संत नामदेव को दिया जाता रहा है; किन्तु डॉ. अशोक कामत की प्रस्तुत पुस्तक के द्वारा कुछ नवीन सामग्री प्रकाश में आई है, जिससे उपर्युक्त स्थापना पर पुनर्विचार की आवश्यकता जान पड़ती है। वैसे डॉ. कामत से पूर्व कुछ अन्य विद्वानों ने भी स्फुट रूप से आचार्य दामोदर और उनकी हिंदी पदावली का उल्लेख किया है; किन्तु उनकी जीवनी तथा दर्शन आदि पर विद्वत्तापूर्ण भूमिका के साथ उनकी समस्त चौपदियों के सटिप्पण प्रकाशन का श्रेय संभवत: डॉ. कामत को ही दिया जाना चाहिए। महानुभाव पंथ के संस्थापक श्री चक्रधर स्वामी के प्रमुख शिष्य श्री नागदेवाचार्य की आज्ञा पालन करने के लिए उनके शिष्य दामोदर पण्डित ने साठ चौपदियों की रचना की थी। इनमें से पचीस ऐसी हैं जिनपर हिंदी भाषा (खड़ी बोली तथा ब्रजभाषा) का पर्याप्त प्रभाव लक्षित होता है। क्रियापद, परसर्ग आदि सभी हिंदी के हैं। इन चौपदियों के हस्तलेख की समाप्ति पर लिपिकर्ता ने बताया है कि "तयाची प्रशंसा भटोबास केली" अर्थात् भट (श्री नागदेवाचार्य) ने (दामोदर पण्डित कृत) इन चौपदियों की प्रशंसा की।" नागदेवाचार्य का निधन कुछ विद्वान शक १२२४ में और कुछ अन्य विद्वान शक् १२३४ में मानते हैं। इस प्रकार इन चौपदियों का रचनाकाल डॉ कामत ने शक् १२३४ के पूर्व माना है। दूसरी ओर संत नामदेव (शक ११९२–१२७२) के संबंध में यह अनुमान लगाया जाता है कि वे शक १२५४ के करीब पंजाब गए होंगे, अत: डॉ. कामत यह मानते हैं कि उनकी हिंदी रचनाएँ शक् १२५४ के बाद की ही हो सकती हैं, क्योंकि "पंजाब में जाने से पूर्व उनके द्वारा हिंदी में रचनाएँ करने के संबंध में निश्चित प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।" इस प्रकार आचार्य दामोदर पण्डित यद्यपि संत नामदेव के पूर्ववर्ती नहीं हैं, किंतु उनकी हिंदी चौपदियों की रचना नामदेव की हिंदी रचनाओं से लगभग बीस वर्ष पहले हुई होगी–यह स्थापना डॉ कामत की है।

प्राचीन संतों के संबंध में प्रामाणिक सामग्री के अभाव के कारण यद्यपि उपर्युक्त स्थापना के संबंध में यत्किंचित् मतभेद भी हो सकता है; किन्तु यह सामग्री गंभीर ऊहापोह की अपेक्षा रखती है-इसमें कोई संदेह नहीं। डॉ. कामत ने सूचित किया है कि इस पुस्तक में संकलित चौपदियों का पाठ डॉ. म. प. पेठे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

और श्रीमान् वि. ग. पोंक्षे द्वारा निर्धारित पाठ के अनुसार है जो महानुभावाश्रम, पैठण रोड, औरंगाबाद में सुरक्षित हस्तलेख पर आधारित है और "मराठी संशोधन-पत्रिका" में प्रकाशित हो चुका है। इससे पूर्व महानुभाव पंथ के महंत दत्तनाथजी ने पेशावर में प्राप्त हस्तलेखों के आधार पर इन चौपदियों का प्रकाशन नित्य पाठ के लिए कराया था। कामतजी ने मूल हस्तलेख के लिपिकाल आदि का यदि कुछ विवरण किया होता तो उसकी प्राचीनता का कुछ अनुमान लगाया जा सकता था और साथ ही नागदेवाचार्य की उस प्रशंसात्मक उक्ति की प्रामाणिकता पर भी कुछ विचार किया जा सकता था, जिसपर डॉ. कामत की स्थापना मुख्य रूप से आधारित है। प्राचीन सिद्धों तथा संतों की वाणियाँ बहुत कुछ अनिश्चय तथा संदेह की पर्तों में लिपटी है, यह तथ्य अनुसंधायकों से छिपा नहीं है। इन चौपदियों में अधिकतर नागार्जुन की छाप मिलती है–केवल एकाध स्थलों पर "नागार्जुन का पूता" ऐसी छाप मिलती है। कहीं-कहीं चक्रधर स्वामी का भी उल्लेख होने के कारण ये "नागार्जुन" महानुभावीय नागदेवाचार्य (आचार्य दामोदर के गुरु) ही जान पड़ते हैं; किन्तु हिंदी प्रदेश के हस्तलेखों में भी नागार्जुन के नाम से कुछ सबदियाँ मिलती हैं। डॉ. कामत ने यदि उनका भी तुलनात्मक अध्ययन किया होता तो इन चौपदियों के कर्ता पर संभवत: कुछ अधिक प्रकाश पड़ता। इसी प्रकार हिंदी प्रधान पच्चीस चौपदियों की क्रियाएँ, परसर्गों आदि की प्रयोगावृत्तियों का भी यदि लेखा-जोखा उपस्थित किया गया होता तो मराठी की तुलना में उनके आधिक्य का अधिक निश्चयात्मक आधार मिल जाता। मैंने यह भी अनुभव किया है कि प्राचीन संतों की वाणियों को सुग्राह्य बनाने के लिए उनकी टीका भी अत्यंत आवश्यक है, भले ही उसमें त्रुटियाँ रह गई हों। आशा है, डॉ. कामत इसमें अगले संस्करण में इन अभावों की पूर्ति का भी प्रयास करेंगे।

राष्ट्रभाषा हिंदी का आदि रूप अहिंदी भाषा-भाषी प्रदेश महाराष्ट्र में निर्मित हुआ– यह अपने में ही कम महत्त्वपूर्ण तथ्य नहीं है। साथ ही साहित्यिक तथा भाषिक अनुसंधान के क्षेत्र में महाराष्ट्र के विद्वानों का योगदान भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। डॉ. कामत का यह प्रयास गाम्भीर्य और विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण की दृष्टि से महाराष्ट्रोचित परम्परा की एक श्रेयस्कर और सराहनीय शृंखला है, अत: वे हमारे साधुवाद के पात्र हैं।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय **डॉ. पारसनाथ तिवारी**

२८–४–७६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महाराष्ट्र और हिंदी

स्वाधीनता के अनंतर जनवाणी हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा का गौरव-पूर्ण पद प्राप्त हुआ। भारत के विभिन्न भाषा-भाषी लोगों ने अपनी प्रादेशिक भाषाओं के साथ-साथ हिंदी को अपनाना आरंभ किया। हमारे महाराष्ट्र में यह कार्य विशेष आस्था के साथ हुआ। इसके कई कारण हैं। एक तो देश-भावना और राष्ट्रीयता में महाराष्ट्र के निवासी—सदैव अग्रसर रहे हैं। परंतु दूसरा एक कारण सांस्कृतिक है। जो संभवतः अधिक महत्त्वपूर्ण है।

महाराष्ट्र-भाषा मराठी के समान राष्ट्रभाषा हिंदी भी हमारे महाराष्ट्र में सदियों से बोली जा रही है। इतनाही नहीं तो महाराष्ट्र के प्रदेशों में हिंदी भाषा में रचनाएँ भी प्रस्तुत की जाती रही हैं। महाराष्ट्र के हिंदी साहित्य का इतिहास उतनाही प्राचीन है। जितना कि हिंदी प्रदेश के हिंदी साहित्य का इतिहास।

हिंदी की उपभाषाओं में व्रजभाषा, अवधी और राजस्थानी प्रमुख हैं। बोलियों में सबसे मुख्य स्थान दिल्ली में मेरठ के आसपास बोली जानेवाली खड़ी बोली को प्राप्त है। यही खड़ी बोली उन्नीसवीं शती में हिंदी की गद्य-भाषा बनी। सन १९२० ई. के बाद आधुनिक काल में कविता-भाषा हुई। और साथ-साथ स्टँडर्ड भाषा अथवा मानक भाषा का भी सम्मान इसी खड़ीबोली को प्राप्त होने के कारण यही साहित्यिक हिंदी हुई। स्वाभाविक रूप में अहिंदी भाषी जब हिंदी का अध्ययन करते हैं तब खड़ीबोली का अध्ययन करते हैं। इस खड़ीबोली हिंदी के साहित्यिक विकास का अवलोकन भी उनके लिए एक स्वाभाविक कुतूहलता का विषय रहता है।

हिंदी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में जिन रचनाओं का संकलन किया गया उनमें खड़ीबोली के साथ साथ राजस्थानी, व्रजभाषा, अवधी बिहारी आदि हिंदी प्रदेश की अन्य बोलियों की रचनाओं का भी संकलन अनुस्यूत है। और तो और, जब हम हिंदी के प्राचीन काव्य का अध्ययन करते हैं तब अक्सर खड़ीबोली के अलावा हिंदी की अन्य बोलियों के ग्रंथोंकाही अध्ययन करते हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है, हिंदी में खड़ीबोली का साहित्य केवल आधुनिक काल में ही प्राप्त है।

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

खड़ीबोली की प्राचीन रचनाओं के प्रमाण स्वरूप हिंदी-प्रेमी मुसलमान पंडित कवि अमीर खुसरो के फुटकर काव्य के उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं। अमीर खुसरो का काल ईसाकी तेरहवीं शती है। (सन १२५३-१३२५ ई.)[1] हिंदी भाषा के इतिहास के विद्वान् अध्येता डॉ. बाबूराम सक्सेना खुसरो की प्राप्त रचनाओं की हिंदी भाषा को प्रामाणिक नहीं मानते।[2] फिर भी उन्होंने खड़ीबोली के इतिहास का आरंभ तेरहवीं शती से स्वीकार किया है। संभवतः अमीर खुसरो के आधार पर ही उन्होंने यह तर्क किया है। परंतु अमीर खुसरो के अनंतर खड़ीबोली हिंदी की रचनाओं के उदाहरण उन्नीसवीं शती तक हिंदी साहित्य के इतिहास में प्राप्त नहीं होते। वास्तव में यह स्थिति अत्यंत आश्चर्यजनक है। परंतु वास्तविकता के रूप में स्वीकार करना पड़ता है कि तेरहवीं शती से लेकर उन्नीसवीं शती तक लगभग छः सौ वर्ष खड़ीबोली में रचनाएँ हिंदी प्रदेशों में नहीं प्राप्त हुईं। और अगर हुई भी हों तो कम-से कम आजतक वे रचनाएँ प्राप्त नहीं हो सकी हैं।

उर्दू भाषा का विकास खड़ीबोली के इतिहास से संबद्ध माना गया है। हिंदी के विद्वानों ने उर्दू को खड़ीबोली से उद्भूत एक बोलचाल की भाषा के रूप में देखा है।

इस उर्दू की साहित्य परंपरा भी काफी पुरानी नहीं दिखाई देती। सन १७०० ईसवीं के दरमियानही उर्दू का साहित्य आरंभ होता है।[3] इस उर्दू के विकास के लिए दक्षिण की परिस्थितियाँ विशेष अनुकूल साबित हुईं। दक्षिण में महाराष्ट्र और आंध्रप्रदेश के भागों में मुसलमानों की सत्ता स्थिर हो गई थी। ये मुस्लिम शासक साहित्य प्रेमी थे। गोवलकुण्डा के राजा मुहंमद कुली कुतुबशाह (सन १५८० से १६३७ ई.) और मुहम्मद कुतुबशाह (सन १६११ से १६६८ ई.) स्वयं अच्छे कवि थे। गवासी, इबने निशानी, तबई, जुनैदी, कुतबी जैसे अनेक श्रेष्ठ कवि अब्दुल कुतुबशाह के दरबार में जिनका काल सन १६२५ से १६८२ ईसवी तक रहा है। इन कवियों की भाषा को उर्दू की पूर्व-भाषा अर्थात् दक्खिनी कहा जा सकता है।

---

१. डॉ. भगीरथमिश्र, रामबहोरी शुक्ल : 'हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास' हिंदी भवन, इलाहाबाद, १९५६, पृष्ठ ३

२. डॉ. बाबूराम सक्सेना : 'दक्खिनी हिंदी' पृष्ठ ३०

१. डॉ. भोलानाथ तिवारी : 'हिंदी भाषा' पृष्ठ २२८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दक्खिनी हिंदी के इतिहास को देखते हुए यह स्पष्ट है कि, वह उर्दू अथवा खड़ीबोली हिंदी के पूर्व कम से कम दो सौ वर्षों की अपनी परंपरा रखती है। ईसाकी दसवी ग्यारहवीं शती से लेकर महाराष्ट्र में नाथसिद्धों का संचार रहा है। इन साधुओं ने यहाँ प्रचलित दक्खिनी हिंदी अथवा दक्खिनी भाषा को स्वीकार किया। और अपने विचारों का प्रसार करते हुए वे देश के कोने-कोने में पहुँचे। दक्षिण की इस सिद्ध स्वीकृत सधुक्कडी भाषा पर मराठी का स्वाभाविक प्रभाव रहा।

महाराष्ट्र में प्राप्त आदिकालीन मराठी-प्रभावित हिंदी भाषा में लिखित सामग्री अभी अलक्षित ही रही है। तेरहवीं शती के महानुभावीय आचार्य दामोदर पंडित की हिंदी-मिश्रित मराठी और मराठी मिश्रित हिंदी वाणी ऐसी ही एक विचारणीय एवम् महत्त्वपूर्ण सामग्री है। इसका खड़ीबोली के ऐतिहासिक विकास को स्पष्ट करने की दृष्टि से महत्त्व है। खड़ीबोली के क्रियारूप और कारक इन रचनाओं में प्राप्त होते हैं।

महानुभव पंथ-संस्थापक महात्मा चक्रधर तथा 'लीळाचरित्र'

महाराष्ट्र की प्रमुख दार्शनिक विचार-धाराओं में से एक प्राचीन विचार-धारा "महानुभाव पंथ के" के रूप में विख्यात है। उसके संस्थापक महात्मा चक्रधर स्वामीजी तेरहवीं शती के व्यक्ति थे। (संभवत: सन ११९४ से १२७४ ई.) उनके देहत्याग के अनंतर उनके एक प्रमुख शिष्य श्री नागदेवाचार्य छत्तीस वर्ष तक जीवित रहे। इन्होंने इस पंथ की दार्शनिक धारणाओं तथा विचारधारा को आग बढ़ाने में अपनी ओरसे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।[१]

श्री नागदेवाचार्य ने अपने पूजनीय गुरु के जीवन-चरित्र का लेखन करने का महत्कार्य अपने दूसरे एक प्रमुख शिष्य म्हाइंभट को सौंप दिया जिसे उन्होंने अल्पावधि में परिपूर्ण भी कर दिया। चौदहवीं शती के पूर्व ही महात्मा चक्रधर की जीवनलीलाओं तथा उपदेश वचनों का विस्तृत संकलन "लीळाचरित्र" के नाम से महानुभावीय सांकेतिक मराठी लिपि में लिपिबद्ध किया गया। इसीलिए यह महत्त्वपूर्ण ग्रंथ अविष्कृत स्वरूप में प्राप्त हो सका जिसका हमारे अध्ययन की दृष्टि से नितान्त महत्त्व है।

बारहवीं शताब्दी के आसपास महाराष्ट्र में प्रचलित प्राचीन मराठी बोलबाल की भाषा में रचित यह ग्रंथ तत्कालीन महाराष्ट्रीय सामाजिक जीवन का विशद एवम् प्रभावकारक चित्रण हमारे सम्मुख उपस्थित करने की क्षमता रखता है।

---

१. डॉ. वि. भि. कोलते, : "श्री चक्रधर चरित्र" अरुण प्रकाशन, मलकापुर, प्र. सं. १९५२, पृष्ठ ७६.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

महानुभाव पंथ-संस्थापक महात्मा चक्रधर स्वामी स्वयम् परिभ्रमणशील वृत्ति रखनेवाले एक धर्मप्रसारक होने से उनके लौकिक अनुभवों का क्षेत्र भी पर्याप्त व्यापक था। इसीसे उनके जीवनचरित्रपर ग्रंथ के रूप में लिखे गए 'लीळाचरित्र' नामक इस प्राचीन महानुभावीय मराठी ग्रंथ में तत्कालीन महाराष्ट्रीय जन-जीवन के बहुविध अंगों का सूक्ष्म परिचय दृष्टिगोचर होता है जो अतीव स्वाभाविक तथा उपादेय है।

महात्मा चक्रधर स्वामी का समस्त जीवन परमार्थप्रेरित एवम् परमार्थप्रेरक रहा। कहा जाता है कि अपने जीवन के आरम्भिक वर्षों में वे गुजरात के राज-घराने से संबद्ध थे। परमार्थ साधना में रुचि उत्पन्न होने से इन्होंने गृहत्याग किया और गुरुबोध की प्राप्ति के हेतु निकल पड़े। दीर्घकाल तक एकान्तवास की साधना में लीन रहे तथा अपनी परमार्थ बोध-प्राप्ति के लिए "उभयगंगातीर" पर अर्थात् दक्षिणगंगा गोदावरी के दोनों तटों का परिभ्रमण भी वे करते रहे।

अपने जीवन की इस महत्त्वपूर्ण पारमार्थिक भ्रमण-यात्रा में इनको तत्कालीन समाज में प्रचलित अनेकविध देवी-देवताओं की उपासना-पद्धतियों का निरीक्षण परीक्षण कर परिचय प्राप्त करना संभव हुआ। अनेक सिद्ध-साधक महात्माओं से प्रत्यक्ष परिचय तथा वार्तालाप एवम् सत्संग करने का सौभाग्य भी उन्हें प्राप्त हुआ। इस परिचय, वार्तालाप, सत्संग तथा पारमार्थिक चर्चा-विमर्श का रोचक वृत्तान्त "लीळाचरित्र" ग्रंथ में उपलब्ध होता है। यह एक ऐसी बहुमूल्य निधि है जिससे महात्मा चक्रधर स्वामी के जीवन प्रसंगों के संदर्भ में ही नहीं अपितु तत्कालीन धर्मसाधनाओं की ऐतिहासिक एवम सांस्कृतिक सामग्री जुटाने की दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण सहाय्यता प्राप्त होती है। "लीळाचरित्र" में उपलब्ध ऐसी महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक सामग्री का सर्वप्रथम निर्देश मराठी में श्रीमान रामचन्द्र चिंतामण ढेरे ने किया था।[१]

"लीळाचरित्र" के चर्यापद

"लीळाचरित्र" का सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि महात्मा चक्रधर स्वामी, सिद्ध एवम् नाथों के जीवन-चरित्रों से अच्छी तरह परिचित थे। भूर्तहरि, गोरक्षनाथ, विकृताधरणी सिद्ध लुईया, नागार्जुन, कनेरी, जालंधर, गोविंदचन्द्र, कान्हपाद आदि के असंख्य उल्लेख इस 'लीळाचरित्र' के विविध प्रसंगों में उपलब्ध होते हैं। इसके साथ-साथ नाथ-सिद्धों की बानियों के दर्शन भी यहाँ हो जाते हैं। स्वयम् महात्मा चक्रधर स्वामी ऐसी बानियों के श्रवण

१. 'गुरु गोरक्षनाथ : चरित्र आणि परंपरा" डॉ. रा. चिं. ढेरे, वोरा अ‍ॅण्ड कंपनी पब्लिशर्स प्रा. लि., मुंबई २. प्र. सं. १९५९, पृष्ठ १९०-१९९

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

में रस लेते थे । उनकी एक प्रमुख शिष्या आबाइसा अथवा आवैसा के द्वारा एक चौपदी के गाने का प्रसंग "लीळाचरित्र" में मिलता है जो उपर्युक्त कथन को भलीभाँति स्पष्ट कर देता है। आबाइसा द्वारा गायी गई चौपदी का बड़े मनोयोग-पूर्वक श्रवण करने के उपरान्त महात्मा गुरु चक्रधर स्वामी कथन करते हैं, यथा :

"हे नाथवाणी : हे सीधवाणि : नाथवाणि ते नीकी :
नाथवाणि सींधवाणि गावों ए :
तैसें अर्वाधीक गावों नेए: ।"[१]

अर्थात् "यह तो नाथ-वाणी है! अतः यह सिद्धवानी है। नाथ-वाणी सुमधुर है। ऐसी नाथ-वाणी अथवा सिद्धवाणी गेय होती है। आधुनिक काव्य में इस प्रकार की गेयता प्राप्त नहीं होती।" तेरहवीं शतीके महात्मा चक्रधर स्वामी की यह 'नाथ-वाणी' प्रशस्ति अपने आपमें अन्यतम है।

एक दूसरा प्रसंग महात्मा चक्रधर स्वामी के महालक्ष्मी मंदिर में विहार के लिए जाने की घटना का मिलता है। यहाँ उन्हें जोगी के वस्त्र, खपरी, लाठी आदि वस्तुएँ दिखाई देती हैं। इन्हें देखकर क्षणैक 'जोगी बनने का' मोह उन्हें ग्रस लेता है और वे अपने वस्त्र उतार देते हैं। मुखपर विभूति-लेपन कर अपने सर्वांग में भस्म-लेपन भी वे कर लेते हैं। हाथों में खपरी लेकर और लाठी पकड़-कर वे जोगी वेश में गायन भी करने लगते हैं। यथा :

कर धरि खपर : भिक्षापात्र : भस्म विधुळीत :
विमळसीत गात्र : नितय चळ चित्त : मंद मंद मनसो विगळित गात्र :
परमानंद परमानंद : मन भुलि रे, मन भुलि रे :[२]

हाथों में खपरी का भिक्षापात्र सँभाले हुए भस्मविलेपित नाथजोगी का चित्र उपस्थित करने वाला यह हिन्दी गीत अपने आप में अत्यंत सुन्दर है। 'मन भुलि रे मन भुलि रे' की पुनरुक्ति नितान्त रमणीय है। 'परमानंद परमानंद' का उद्घोष अत्यंत आल्हाद सूचक एवम् स्थिति को सजीव रूपमें शब्दांकित करने वाला है। महानुभाव पंथ संस्थापक चक्रधर स्वामी की यह आनंदित अवस्था विचारणीय है। यह गीत नाथ-संप्रदाय के योगी-वेष के चक्रधर स्वामी पर प्रभाव

१. डॉ. शं. गो. तुळपुळे, संपादक : "लीळाचरित्र" उत्तरार्ध भाग १, प्रकाशक सुविचार प्रकाशन मण्डळ. नागपूर, पुणे प्र. सं १९६७, लीळा क्र. १६१, पृष्ठ १०८.

२. डॉ. शं. गो. तुळपुळे, संपादक : "लीळाचरित्र" पूर्वाध, भाग २, लीळा क्र. २४७, पृष्ठ ३१

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

का विवरण भी प्रस्तुत कर देता है। इस गीत का गायन पूर्ण करने के अनंतर आबैसा नामक अपनी एक प्रिय शिष्या को संबोधित करते हुए महात्मा चक्रधर स्वामी के वचन उल्लेखनीय हैं। यथा :

" मागील सीध एणें वचने भिक्षा करिति : "[१]

अर्थात् एक जमाने में सिद्ध इस प्रकार से गीत गायन कर भिक्षा माँगते फिरते थे।

महात्मा चक्रधर स्वामी द्वारा किये गए नाथ-गीत-गायन के एक अन्य प्रसंग का भी " लीळाचरित्र " में इस प्रकार वर्णन मिलता है।[२]

एक समय महात्मा चक्रधर की शिष्या उमाइसा हीले-हीले स्वरों में कुछ गा रही थी ? महात्मा ने उस समय उसे गायन के लिए आग्रह किया तब वह लज्जित हुई। उसने कहा,

" मी काइ गावों जाणतीयें "

अर्थात् " मैं गायन की कला क्या जानूं ? " तिसपर महात्माने उत्तर दिया,

" तुम्ही गा : मग हे गाईल "

अर्थात् " पहले तुम गाओ, फिर मैं भी गाऊँगा " इस गुरु-आज्ञा का श्रवण कर उमाइसा एक गाना गाती है।

" बापू रे मोरी अवस्था लो जाहां जावो ताहां
आप सरिसा तवं कोई न करे मोरी चीतां "

उमाइसा का यह हिंदी गान अतीव महत्त्वपूर्ण है। यह मराठी साहित्य में प्राप्त हिंदी भाषा का प्रथम प्रयोग है।[3] तत्पश्चात् महात्मा भी धनाश्री राग में एक चौपदी गाते हैं। यथा,

" मूळस्थानीं भीड आँधों हो जोइ :
जेंवि ना काळकळाइ :
गुरुवचनें बोडियाणा दृढ आंधों :
जेंवि ना चंचळ होइ : ।। ध्रु. ।।

---

१. डॉ. शं. गो. तुळपुळे, संपादक : " लीळाचरित्र " पूर्वार्ध, भाग २, लीळा क्र. २४७, पृष्ठ ३१.

२. डॉ. शं. गो. तुळपुळे, संपादक : " लीळाचरित्र " उत्तरार्ध, भाग २, लीळा क्र. ३१०, पृष्ठ ५२-५३.

३. तत्रैव–लीळा. क्र. ३२१.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

गोरक्षीहो : सुनि बँधी : स्थिर होई :
जेणें तुह्मी जाया :
सोपरि मारो : वैरी आनु नाहीं कोइ : ।। १ ।।
पांचै पंचाएन: पांचैं जान हो :
धावति आन आन स्थानीं :
उन्मनी कारणें नीज मुनी लीन :
ना ते मारिएले नीज स्थानीं ।। २ ।।
पवन पूरो मन स्थीर करो :
चंद्रा मीळावो भानु :
आयागमन ये दुष नीवारो :
बूधि राखो आपणा ।। ३ ।।
माटीं जाता नीवारो हो :
भीडो वाइ वो उजाइ :
अलख नीरंजनीं लो कर हो :
भावाना भाव होइ ।। ४ ।।[1]

मूलस्थान, उड्डियान बंध (वोडियाणा), उन्मनी, मन पवन, चंद्र–सूरज (भानु), अलख–निरंजन आदि नाथपंथीय पारिभाषिक शब्दावली से युक्त यह हिंदी चौपदी अथवा चर्यागीत, नाथपंथीय दर्शन के घोर विरोधी महानुभाव पंथ के संस्थापक आचार्य द्वारा गाया जाता है-यह तथ्य विशेष चिंतनीय तथा विचारणीय है। ऐसे दार्शनिक गीतों की महाराष्ट्र में आत्यंतिक जन-प्रियता ही इससे प्रमाणित हो जाती है।[2] अपने नए दार्शनिक विचारों को विरोध में खड़ा करने पर भी अपने पूर्वापर नाथ संप्रदाय के कुछ प्रभावों को महानुभाव पंथ के आचार्य चक्रधर स्वामी भी नहीं हटा सके। यह इस बात को प्रमाणित करता है कि नाथ संप्रदाय की

---

१. डॉ. शं. गो. तुळपुळे, संपादक : " लीळाचरित्र " उत्तरार्ध, भाग २, लीळा क्र ३१०, पृष्ठ-५२-५३

२. ' लीळा चरित्र ' ग्रन्थ की ऐसी महत्त्वपूर्ण सामग्री को हमने अपने शोध प्रबंध के अंतर्गत प्रस्तुत किया है। " महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य " जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, १९७६.

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विचार तथा आचार परस्परा पूरी गहराई के साथ महाराष्ट्र के जनसमाज में अपनी जड़ें जमा चूकी थीं। इनको एकदम से उखाड़ फेंकना आसान कार्य नहीं था।[१]

ऊपर उल्लिखित चौपदी को हिन्दी में प्रथम प्रकाशित करने का श्रेय आचार्य विनयमोहन शर्माजी को प्राप्त है। परन्तु दुर्भाग्यवश यह कहना पड़ता है कि आपके द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ में इस चौपदी का मुद्रण अत्यन्त सदोष हुआ है। लगभग प्रत्येक शब्द गलत छपा है। और इसीसे मूल चौपदी का सारा सौंदर्य भी नष्ट हुआ है और अर्थ-ग्रहण भी दुष्कर हो गया है।[२]

इस चौपदी का कर्तृत्व आचार्य महोदय ने महात्मा चक्रधर को देते हुए कहा है कि, "महाराष्ट्र में सबसे प्राचीन हिन्दी वाणी महानुभाव पंथ के प्रवर्तक महात्मा चक्रधर की प्राप्त होती है।"[३] वास्तव में यह कथन थोड़ासा भ्रान्तिमूलक एवम् संदेहास्पद माना जाएगा। ऊपरिनिर्दिष्ट चौपदी के रचयिता महात्मा चक्रधर नहीं अपितु कोई अनाम नाथ-सिद्ध है। महात्मा ने उसका केवल गायन किया है। क्योंकि इस तरह के नाथ सिद्धों के गीत गाने की परंपरा महाराष्ट्र में प्रचलित थी।

चौपदी : चतुष्पदी नहीं, चर्यापद।

यद्यपि महात्मा चक्रधर स्वामी द्वारा गायी गई चौपदी की रचना का श्रेय उन्हें नहीं दिया जा सकता, फिर भी यह तथ्य विचारणीय है कि महात्मा चक्रधर स्वामी ऐसा चौपदी का गायन क्यों करते हैं? यहाँ एक बात निश्चित हो जाती है कि "लीळाचरित्र" में उल्लिखित यह चौपदी 'नाथ-वाणी' अथवा 'सिद्ध-वाणी' का ही एक तत्कालीन प्रकार है। आबैसा ने जब चौपदी का गायन किया तब स्वयं महात्मा चक्रधर स्वामी उसे 'नाथवाणी' कहकर गौरव प्रदान करते हैं। महात्मा चक्रधर स्वामी द्वारा गायी गयी चौपदी का रचना-कौशल एवम् उसमें अभिव्यक्त विचारों पर ध्यान देते हुए यह भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि वह नाथ अथवा सिद्धों की वाणी है। यहीं एक दूसरा ऐतिहासिक सत्य प्रकट करना समीचीन होगा। महानुभावीय पण्डित कवि एवम् नागदेवाचार्य के शिष्य आचार्य दामोदर पण्डित ने साठ चौपदियों की रचना की है। इनकी रचना का तो उद्देश ही नाथपंथीय साधुओं से वादविवाद करना था। नाथपंथीय शब्दावली एवम् गीत-

---

१. रामचन्द्र चिंतामण ढेरे, "लीळा चरित्रातील सिद्ध आणि नाथ" (वेंकटेश-शास्त्री जोशी, रा. चिं. ढेरे, वसंत अ गाडगीळ.) संपादक : 'संस्कृति सुगंध' प्रकाशक, जोशी-लोखण्डे प्रकाशन, पूना ३०. सन १९७०.

२. आचार्य विनयमोहन शर्मा, "हिन्दी को मराठी संतों की देन" – प्रकाशक– बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना ३. प्र. सं. १९५७, पृष्ठ ८४.

३. तत्रैव, पृ. ८३.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सरणी का प्रयोग कर रची हुई ये चौपदियाँ ही आद्य महानुभावीय हिंदी कविता है जिस पर आगे चलकर हमने सविस्तर चर्चा एवम् विवेचन प्रस्तुत किया है।

स्थूल रूप से देखने पर लगता है कि "चौपदी" संज्ञा "चतुष्पदी" से उद्‌भूत हुई हो। परंतु सिद्ध एवम् नाथों के वातावरण में प्रस्तुत "चौपदी" नामक गीत विधा "चतुष्पदी" से कोई संबंध नहीं रखती। न तो ऐसे गीत में चार चरण अथवा चार पद रहते हैं और न उसमें चार संख्या से कोई विवक्षित अर्थ लिया जा सकता है। संभवत: यह शब्द "चर्यापद' का मराठी पर्याय हो। इसीसे हम ऐसे निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नाथसिद्धों के रागबद्ध चर्यापद तत्कालीन महाराष्ट्र में काफी परिचित थे और लोकप्रियता से भी पूर्ण थे।

विभिन्न प्रमाणों से परिपुष्टि

ग्यारहवीं शती के चालुक्य सम्राट सोमेश्वर (द्वितीय) तथा भूलोकमल्ल के "मानसोल्लास" ग्रंथ में भी चर्यापदों की अदभुत लोकप्रियता के लिए प्रमाण मिलता है।

कथासु षट्पदी योज्या विवाहे धवलस्थता।
उत्सवे मङ्गलो गेयश्चर्या योगिजनैस्तथा॥[1]

अर्थात् कथा-कथन के लिए षट्पदी, विवाहादि मंगल पर्वों के अवसर पर धवल-गीत उत्सवादि प्रसंगों में मंगल-गीत तथा योगीजनों के गीत-गायन के हेतु चर्यापदों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

"मानसोल्लास" ग्यारहवीं शती की एक ऐसी विश्वकोशसदृश महाराष्ट्रीय संस्कृत रचना है कि जिसमें तत्कालीन महाराष्ट्रीय समाज-जीवन के विभिन्न अंगोपांगों का विशद विवरण प्राप्त होता है। अत: ऐसे प्रामाणिक संदर्भ ग्रंथ में उल्लिखित चर्यापदों की योगीजन-गेयता का विशेष महत्त्व है।

बारहवीं शती के एक यादवकालीन ग्रंथकार शार्ङ्गदेव ने भी अपने "संगीत रत्नाकर" नामक ग्रंथ में चर्यापदों की अध्यात्म-गोचरता का उल्लेख किया है,

अध्यात्मगोचरा चर्या स्यात्।[2]

अर्थात् चर्या अध्यात्मगोचर होनी चाहिए।

---

१. जी. के. श्रीगोंदेकर, संपादक : मानसोल्लास भाग ३
ओरिएंटल इन्स्टिटयूट, बडोदा, प्र. सं. १९६१, पृष्ठ ८१.

२. एस. सुब्रहमण्य शास्त्री, संपादक : शार्ङ्गदेव विरचित द्वितीय खंड, "संगीत रत्नाकर", ४, २९३, दि अडयार लायब्ररी ॲण्ड रिसर्च सेंटर, अडयार, मद्रास, प्र. स. १९५९.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इसी ग्रंथकार ने चर्यापदों की विशेषता को स्पष्ट करने के अनंतर चतुष्पदी रचना की स्वतंत्र रूप से चर्चा प्रस्तुत की है, जिसमें योगीजन-संबद्धता का कतई उल्लेख नहीं है।

सोलहवीं शती के पूर्वार्ध में हुये हुए महाराष्ट्रीय जैन कवि पण्डित मेघराज ने अपने "जसोधर रास" नामक मराठी कथा-काव्य में नाथपंथीय योगियों की अवहेलना करते हुए चौपदी एवम् नामपंथ के संबंध को स्पष्ट रूप में सूचित किया है। एक देवी-मंदिर के प्रांगण का दृश्य अंकित करते हुए कवि कहता है–

जोगी बैसले बाहिरीं : सुरा पीत ।। १५९ ।।
एक बिजिया छंदे नाचती : एक धांधलिया दांतीं :
मुखी चउपदियाँ गाती : पिसें जैसे ।। १६० ।।
येका गोदडिया पांघुरणे : एका नकटीसंग गमनें :
एके हातीं धरिलें सुणें : दुष्ट देखा ।। १६१ ।
एक सिंगिनाद करिती : एक गोरखी ते स्मरति :
ऐसे कोण जाणे किती : मिळाले वहुते ।। १६२ ।।[१]

जोगी सुरा-पान करते हुए बैठे हैं। कुछ भावविभोर होकर नृत्य कर रहे हैं। कोई वादन कर रहा है। जोगी चौपदियाँ गा रहे हैं, जैसे पागल हों! किसी ने गूदड़ी परिधान की है तो किसी की कुरुप मुद्रा योषिता के साथ मैथुन चल रह है। किसी ने हिंस्र श्वान को हाथों में पकड़ा है। कोई सिंगीनाद कर रहा है तो कोई गुरु गोरक्षनाथ को स्मरण कर रहा है। ऐसे जोगियों का जमघट वहाँ लगा हुआ था।

इस जोगी-निंदा से भी यही तथ्य ध्वनित होता है कि, महाराष्ट्र में सोलहवीं शती तक चौपदियों का प्रचलन जोगी-समूह में निश्चित रूप से विद्यमान था।

इन सब तथ्यों का अवलोकन करने के पश्चात् निष्कर्षात्मक रूप में यह कहना अधिक उचित होगा कि, "लीळाचरित्र" में उल्लिखित "चौपदी" चर्यापदों से अपना निश्चित नाता रखती है। इन गीतों का चतुष्पदी रचना से कोई संबंध न होना एवम् गेयता तथा दार्शनिक अभिव्यक्ति में चर्यापदों से साम्य होना स्पष्ट है। तत्कालीन ग्रंथों में तथा उत्तरकालीन ग्रंथों में भी इस तथ्यको प्रमाणित करने की पर्याप्त सामर्थ्य है। संस्कृत ग्रंथकार जिस संदर्भ में "चर्यापद" संज्ञा का उपयोजन करते हैं, उसी संदर्भ में तत्कालीन तथा उत्तरकालीन मराठी ग्रंथकार

---

१. पं. मेघराजविरचित 'जसोधर रास' संपादक : डॉ. सुभाषचंद्र अक्कोळे जीवराज जैन ग्रंथमाला, सोलापूर, प्र. सं. १९५९. १. १५९–१६२

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

" चौपदी " संज्ञा का प्रयोग करते हैं। अतः कहा जा सकता है कि, " लीळाचरित्र " जैसे तेरहवीं शताब्दी के आद्य मराठी गद्य-ग्रंथ में उल्लिखित चौपदियाँ तत्कालीन महाराष्ट्र में चर्यापदों की लोकप्रियता को ही प्रमाणित कर सकती है।

गोरक्षगीतों का महाराष्ट्र में गायन

महानुभाव पंथ के आरंभिक काल में अर्थात् तेरहवीं शती के कुछ वर्षों पूर्व ही महाराष्ट्र में चर्यापदों की जनप्रियता विशेष विचारणीय है। नाथ सिद्धों के रागबद्ध चर्यापदों का तत्कालीन मराठी समाज को केवल परिचय ही था ऐसी स्थिति नहीं, वरन् ऐसे गीतों का यहाँ गायन भी प्रचारित था।

" लीळाचरित्र " ग्रंथ में ऐसे प्रयुक्त चर्यापदों की पूर्व परंपरा का अनुसंधान करना भी मराठी सामग्री के आधार पर संभव हो जाता है। चर्यापद के ही अर्थ में मराठी संज्ञा रूढ है–' गोरक्षगीत '। प्राचीन काल से ऐसे गोरक्षगीतों का प्रचलन महाराष्ट्र में होने के संबंध में कतिपय महत्त्वपूर्ण प्रमाण हम आगे के पृष्ठों में प्रस्तुत करना चाहेंगे।

ग्यारहवीं शती से भी पूर्व ऐसे गोरक्षगीतों अथवा चर्यापदों का मराठी जन-समाज में प्रचारित रहना, नाथसंप्रदाय के आविर्भाव तथा नाथ-सांप्रदायिक दर्शन की उदयभूमिका निर्णायक विचार करने की दृष्टि से लक्षणीय है। अतः ऐसी महत्त्वपूर्ण सामग्री की उपलब्धि के संबंध में कुछ तथ्यों पर हम विचार-विवेचन करना चाहेंगे।

महाराष्ट्र में छः प्रमुख दार्शनिक धाराओं का मराठी के प्राचीन भक्ति-काव्य से संबंध रहा है।

१. नाथ-संप्रदाय
२. महानुभाव संप्रदाय
३. वारकरी संप्रदाय
४. दत्त संप्रदाय तथा,
५. समर्थ संप्रदाय
६. गाणपत्य संप्रदाय

तेरहवीं शती में महात्मा चक्रधर स्वामी द्वारा संस्थापित तथा नागदेवाचार्य, केशोबास, आचार्य दामोदर पंडित इत्यादि निष्ठावान महानुभावों द्वारा प्रचारित महानुभाव पंथ गोरक्षनाथ प्रणीत नाथ पंथीय दर्शन के घोर विरोध में खड़ा हुआ। परंतु महानुभाव पंथ के ही प्रवर्तन काल में नाथ-वाणी अथवा सिद्ध-वाणी की जन-प्रियता अथवा व्यापक प्रचार के प्रमाणों का पर्याप्त रूप में उपलब्ध होना महाराष्ट्र में तेरहवीं शती से पूर्व नाथपंथ के प्रभाव का द्योतन करता है।

महाराष्ट्र में नाथ पंथीय विचार धारा का सूत्रपात आदिनाथ भगवान शंकर से ही माना जाता है। सभी भक्ति संप्रदायों में मान्य परंपरा इस प्रकार दी जा सकती है

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

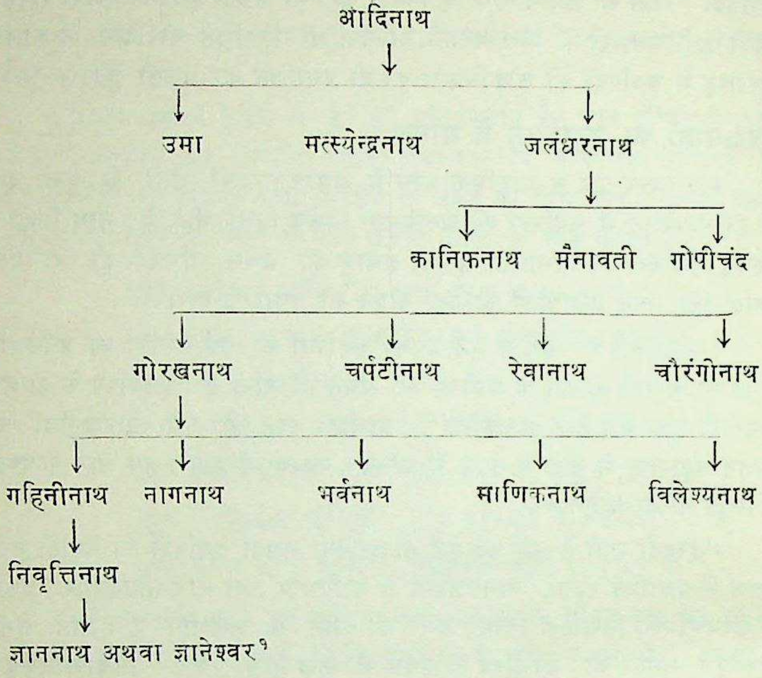

वास्तव में उपरोक्त परंपराही वारकरी संप्रदाय के प्रमुख प्रचारक कवि संत ज्ञानेश्वर अथवा ज्ञाननाथ की गुरु परंपरा है। महाराष्ट्र में नाथपंत तथा वारकरी संप्रदाय का ऐक्य तेरहवीं शती से ही इतना स्पष्ट है कि उसपर चर्चा करने की आवश्यकता नहीं।

प्रमुख वारकरी संतों का नाथ परंपरा से संबंध होना उनके दर्शन पर नाथ प्रभाव को अपरिहार्य कर देता है। इन सभी संतों के उपलब्ध काव्य में गुरु गोरक्षनाथ का गौरव प्राप्त है। महाराष्ट्र में गोरक्षनाथ के नाम पर "गोरक्ष-अमरनाथ संवाद" तथा ओवीबद्ध "गोरख गीता" नामक दो स्वतंत्र ग्रंथ भी प्राप्त होते हैं।[2]

---

१. डॉ. रा. चिं. ढेरे, "गुरु गोरक्षनाथ, चरित्र आणि परंपरा" वोरा अॅण्ड कंपनी, मुंबई, प्रथम संस्करण १९५९. पृष्ठ १८६.

२. वि. ल. भावे, "महाराष्ट्र सारस्वत" : पॉप्युलर प्रकाशन, बम्बई, पाँचवाँ संस्करण १९६३, पृष्ठ ३२.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दत्त भक्ति का प्रचार करनेवाले दत्त संप्रदाय का आविर्भाव पंद्रहवीं शती में तथा रामभक्ति का सोद्देश्य प्रचार करनेवाले समर्थ स्वामी, रामदास के समर्थ संप्रदाय का आविर्भाव सत्रहवीं शती में हुआ। इन दोनों संप्रदायों को आज भी जनप्रियता प्राप्त है। इनके साधुपुरुषों ने नाथ संप्रदाय के दर्शन का यद्यपि स्वीकार नहीं किया, फिर भी इन्होंने नाथ संप्रदाय के विरोध में कोई आंदोलन नहीं खड़ा किया, वस्तुस्थिति तो यह है कि एक महानुभावों का अपवाद छोड़कर अन्य चारों संप्रदाय नाथ पंथीय दर्शन से प्रभावित हैं और गुरु गोरक्षनाथ के उज्ज्वल चरित्र का गौरव गाने में इन संप्रदायों के साधुपुरुष कोई संकोच नहीं अनुभव करते। [1]

साहित्य के इतिहास की प्राचीन सामग्री

महाराष्ट्र के संत सत्पुरुषों से संबद्ध अनेक मठ-मंदिरों में प्राचीन काव्य की हस्तलिखित पोथियाँ तथा बाड (स्फुट कविता के संग्रह) सुरक्षित रहे हैं। उत्तरी भारत की तुलना में महाराष्ट्र में अधिक काल तक स्वतंत्रता रही। आक्रमकों के आघात हुए परन्तु उनका महाराष्ट्र में घोर प्रतिकार भी किया गया। इसीसे यहाँ मठ-मंदिरों को कुछ सुरक्षा भी प्राप्त हो सकी। ऐसे प्राचीन मठों से सैंकडो हस्त-लिखित ग्रन्थ एवम् बाड महाराष्ट्र के शोधमंदिरों में एकत्रित कर दिए गए हैं। पूना का भारत इतिहास संशोधक मण्डल, धुलिया का राजवाडे संशोधन मन्दिर तथा समर्थ वाऊदेवता मन्दिर, यवतमाल का शारदाश्रम, औरंगाबाद की मराठवाडा साहित्य परिषद की पोथीशाला, एकनाथ संशोधन मंदिर तथा औरंगाबाद के ही मराठवाडा विद्यापीठ का प्राचीन हस्तलिखित संग्रह, इत्यादि शोध-मन्दिरों में ऐसी सामग्री सुरक्षित है। आंध्र प्रदेश में हैद्राबाद की आंध्र मराठी साहित्य परिषद द्वारा आंध्र के पुराने मराठी भाषिक भागों से संकलित प्राचीन ग्रंथों की उपादेयता भी उल्लेखनीय है। शिवाजी के प्रतापी पिता शहाजी दक्खिनी मुसलमानों के सरदार के रूप में प्रसिद्ध रहे। इन्हें तामिल नाडु के तंजाऊर प्रदेश की जाहगीर प्राप्त थी। सत्रहवीं शती से लेकर यहाँ हिन्दू प्रभाव रहा। हिन्दू साधु संतों को आश्रय मिलता रहा। यहाँ के मठ-मंदिरों से प्राचीन मराठी हस्तलिखित ग्रंथों का संचय " सरस्वती महाल ग्रंथशाला " नाम से तंजाऊर में प्रसिद्ध है।

---

१. 'समर्थ स्वामी रामदास के नाथ-प्रभावित हिंदी पद'।
(महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य)

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैदराबाद तथा तंजाऊर जैसे अधिकांश अमराठी क्षेत्रों से उपलब्ध मराठी सामग्री का महत्त्व विशेष है। शिवाजी के अनंतर राजकाज के हेतु अनेक सज्जन महाराष्ट्र से सूदूर प्रदेशों में गए। महाराष्ट्र के साधु-संतों को भी इन मराठा प्रभावित राज्यों में आश्रय प्राप्त हुआ। उनके पारंपरिक ग्रंथों को तथा आचार विचारों को सुरक्षा प्राप्त हुई। ऐसी स्थिति में यहाँ उपलब्ध सामग्री महाराष्ट्र के तत्कालीन विश्वासों एवम् परंपरा का अधिक सूचन कर सकती है। यह कहा जा सकता है कि महाराष्ट्र की समन्वयशील भक्ति परंपरा तथा नाथ प्रभावित दार्शनिक धारा का वही चित्र इस सामग्री में भी प्रतिबिंबित है जैसा कि आज महाराष्ट्र में उपलब्ध सामग्री में भी दृष्टिगोचर होता है।

महाराष्ट्र के प्राचीन हस्तलिखित भाण्डारों में सुरक्षित नाथ पंथीय सामग्री का संकलन एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। [१] इन प्राचीन पोथियों में गोरक्षनाथ की स्फुट रचनाओं के भी दर्शन होते हैं। मठ-मंदिरों से संबंधित पुजारियों के नित्य-पाठ की सामग्री में भी गोरक्ष-गीतों का समावेश रहता है। वास्तव में महाराष्ट्र में गोरक्ष पदावली को लोकसाहित्य का स्वरूप प्राप्त हुआ है।

डॉ. पीतांबर दत्त बडथ्वालजी ने अतीव परिश्रमपूर्वक "गोरखबानी" के नाम से गोरक्षनाथ की हिन्दी रचनाओं का जो एक सुसंपादित संकलन प्रयाग के हिंदी साहित्य संमेलन द्वारा विक्रम संवत् १९९९ अर्थात् सन १९४२ ईसवी में प्रकाशित कराया है [२] उसके बीस वर्ष पूर्व महाराष्ट्र में गोरक्ष पदावली का संकलन और मुद्रण हुआ है। ऐसे ग्रन्थों में "श्री शीलनाथ – शब्दामृत" एक ऐसा ही महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसे इंदौर के निकट देवास नामक मराठी रियासत में स्थायिक शीलनाथमहाराज के शिष्यों ने संकलित किया था। फरवरी १९२३ में मुद्रित इस ग्रन्थ में नाथ पंथीय दर्शन को स्पष्ट करनेवाले गोरक्षनाथ की नाममुद्रा से अंकित कुल ५५ पद और गोरक्षनाथ की सांप्रदायिक आरती प्राप्त है। अपने शोध प्रबंध के सामग्री खण्ड में योगी शीलनाथ महाराज का संक्षिप्त जीवनवृत्त देते हुए उनके शिष्यों द्वारा संकलित गोरक्षवाणी हमने दी है। [३]

---

१. पूना के भारत इतिहान संशोधक मण्डल की पोथीशाला में ऐसी सामग्री प्रचुर मात्रा में सुरक्षित है।

२. डॉ. पीतांबरजी बडथ्वाल, 'गोरखबानी' (प्रथम संस्करण) हिंदी साहित्य संमेलन प्रयाग १९४२.

३. 'महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य' पूना विश्वविद्यालय की पी. एच्. डी. पदवी के प्रस्तुत' शोधप्रबंध का सामग्रीखण्ड (अप्रकाशित) जयकर ग्रंथालय, पूना विश्वविद्यालय, पूना ७.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मराठी संत-साहित्य और हिन्दी इतिहास-ग्रंथ

महाराष्ट्र में विगत सात सौ वर्षों से लोकसाहित्य की अद्‌भुत जनमान्यता से समादृत गोरक्ष-गीतों का समुचित अध्ययन दुर्भाग्य से उपेक्षा का विषय रहा। सांस्कृतिक अनुबंधों की तथा अभिमानास्पद साहित्यिक इतिहास की यह महत्त्वपूर्ण सामग्री आज तक प्राय: दुर्लक्षित ही रही। न तो इसका गंभीरतापूर्वक संकलन हो सका और न मराठी के इतिहासकारों ने अपने ग्रंथों में विशेष सावधानी के साथ इस सामग्री का उपयोग ही किया।

महाराष्ट्रीय संतों की काव्य रचनाओं को गंभीर अध्ययन का विषय बनाकर उससे उद्‌भुत सांस्कृतिक एवम् साहित्येतिहास के महत्त्वपूर्ण तथ्य हिन्दी के ही माध्यम से प्रस्तुत करनेवालों में आचार्य विनय मोहन शर्मा,[१] प्रा. भी. गो. देशपांडे,[२] डॉ. वि. भि कोलते,[३] डॉ. प्रभाकर माचवे,[४] डॉ. न. चि. जोगळेकर[५] तथा श्री. प्रयागदत्त शुक्ल,[६] डॉ. कृ. गं. दिवाकर[७] इत्यादि के प्रकाशित ग्रंथों का उल्लेख आवश्यक हो जाता है। इन प्रकाशित ग्रंथों के अतिरिक्त अनेक नये शोधकर्ताओं से अपने शोध-प्रबंधों के द्वारा मराठी संत-साहित्य का अपनी-अपनी विषयगत सीमाओं के अंतर्गत अध्ययन प्रस्तुत किया है जो महाराष्ट्र के विश्व-विद्यालयों की ग्रंथशालाओं में नये अध्येताओं की प्रतीक्षा कर रहा है। अपने अध्ययन को व्यापक रूप देते हुए हमने ऐसी प्रकाशित तथा अप्रकाशित समूची शोध-ग्रंथों की सामग्री को सूक्ष्मता से देखा है। ऐसे ग्रंथों के लेखक अधिकतर मराठी में प्रकाशित साहित्येतिहासिक ग्रंथों पर बहुत अधिक मात्रा में निर्भर रहते देखे गये। यहीं पर मराठी के साहित्येतिहास ग्रंथों के सम्बंध में कुछ कहना अनुचित नहीं होगा।

---

१. "हिन्दी को मराठी संतों की देन" बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना १९५९.
२. "मराठी का भक्ति-साहित्य" चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, १९५९.
३. "मराठी संतों का सामाजिक कार्य" हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई, १९५४.
४. "हिन्दी और मराठी का निर्गुण काव्य"
५. "हिन्दी एवं मराठी के वैष्णव साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन" जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, १९६८.
६. "हिन्दी साहित्य को विदर्भ की देन", विदर्भ साहित्य सम्मेलन, नागपूर, १९६१.
७. "भोंसला राजदरबार के हिन्दी कवि" काशी-नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, १९६८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मराठी साहित्य के प्राचीन एवम् मध्ययुगीय इतिहास का विस्तृत एवम् सप्रमाण लेखन करने का पहला महत्त्वपूर्ण प्रयास श्रीमान् वि. ल. भावे ने अपने " महाराष्ट्र सारस्वत " ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत किया था। सुष्ठु शैली, प्रमाणों की प्रामाणिकता के बावजूद इस ग्रंथ की अपनी सीमाएँ हैं।[1] " सारस्वत " कार के अनन्तर ह. भ. प. श्रीमान् ल. रा. पांगारकर द्वारा लिखित प्राचीन मराठी वाङ्मयेतिहास के तीन खंड विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।[2] पांगारकरजी संत साहित्य के मर्मज्ञ तो थे ही, परन्तु उनकी सश्रद्धता कहीं-कहीं उनके विवेचन में बाधक सिद्ध हो गयी है।

प्रा. गं. बा. सरदार कृत " संत वाङ्मयाची सामाजिक फलश्रुति " वास्तव में पहला मराठी संतसाहित्य का मार्मिक विवेचन है।[3] श्रीमान् पं. रा. मोकाशी कृत " महाराष्ट्रातील पांच संप्रदाय "[4] डॉ शं. गो. तुळपुळे द्वारा लिखित " पांच संत कवि "[5] तथा " सारस्वत-पुरवणी "[6] गुरुदेव रामचन्द्र दत्तात्रेय रानडे द्वारा अंग्रेंजी में विरचित महाराष्ट्र की आध्यात्मिक परमार्थीओं का इतिहास[7] तथा प्राचार्य ह. भ. प. शंकर वामन दाण्डेकर विरचित " वारकरी संप्रदाय का इतिहास "[8] ये कुछ अन्य ग्रंथ हैं जिनमें प्राचीन मराठी साहित्य के इतिहास की सामग्री मुख्यतः संकलित हुई। इन्हीं ग्रंथों को आधार बनाकर हिन्दी में मराठी साहित्य का परिचय प्रस्तुत किया गया है।

---

१. " महाराष्ट्र सारस्वत " (द्वितीय संस्करण) प्रकाशक : भारत इतिहास संशोधक मण्डल, पूना. १९१९.
२. " मराठी वाङ्मयाचा इतिहास " खंड : १, प्रकाशक : केशव भिकाजी ढवळे मुंबई, १९३२.
३. " संत वाङ्मयाची सामाजिक फलश्रुति " महाराष्ट्र साहित्य-परिषद, पूना, प्रथम संस्करण, १९५०.
४. " महाराष्ट्रातील पांच संप्रदाय " प्रकाशक : प्रसाद प्रकाशन, पूना, १९५४.
५. " पांच संत कवि " डॉ. शं. गो. तुळपुळे, व्हीनस प्रकाशन, पूना. प्र. सं. १९५९.
६. " महाराष्ट्र सारस्वत " (पांचवे संकरण के साथ संलग्न), पॉप्युलर प्रकाशन, बम्बई, १९६३.
७. " मिस्टिसिझम इन महाराष्ट्र " (हिस्टरी ऑफ इंडियन फिलॉसॉफी, खंड ७), पूना, १९३३.
८. " वारकरी सम्प्रदायाचा इतिहास " प्रा. दाण्डेकर धार्मिक वाङ्मय प्रकाशन मण्डल, पूना, द्वि. सं. १९५७.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन स्वनामधन्य अनुसंधाताओं के प्रयत्न तथा परिश्रमों के प्रति आदरभाव रखते हुए भी हम यह कहना चाहेंगें कि, इन पूर्व-प्रयत्नों को अब नए अनुसंधानों के परिप्रेक्ष्य में सुधारकर परिपुष्ट करना नितान्त आवश्यक हो गया है।

वारकरी सम्प्रदाय के प्रभावी प्रचारक तथा उत्तरी भारत की संत परम्परा के अग्रणी संत नामदेव के विराट कर्तृत्व का गौरव तो बहुत किया गया; परंतु इस बहुचर्चित संत का प्रामाणिक चरित्र अथवा उसके अद्भुत कार्यकर्तृत्व का विश्वसनीय वृतान्त लिखने का कार्य अभी अधूराही रहा है। अभी-अभी प्रकाशित स्फुट लेखों तथा साम्प्रदायिक रचनाओं के आधार पर बल देते हुए डॉ. हेमंत इनामदार ने अपने प्रबंध की रचना की।[1] संत नामदेव की जन्म सप्तम शताब्दी के शुभ अवसर पर अनेक विद्वानों एवम् नए अध्ययताओं द्वारा लिखित लेखों का एक विस्तृत संकलन प्रकाश में आया है।[2] केंद्रीय शासन तथा महाराष्ट्र शासन के द्वारा भी कुछ पुस्तिकाएँ, ग्रन्थ तथा पत्रिकाओं के विशेषांक प्रकाशित हुए। परन्तु इन सभी कृतियों का अवलोकन करने पर भी यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि संत नामदेव का पूर्ण अध्ययन हो पाया है।

वास्तव में नाथ सम्प्रदाय के आविर्भाव काल से ही महाराष्ट्र का उससे गहरा सम्बन्ध रहा है। गुरु गोरक्ष नाथ आदिन ाथसिद्धों के चरित्र तथा उनकी रचनाएँ महाराष्ट्र में परिचित रहने की एक सुदीर्घ अभिमानास्पद परम्परा रही है। मराठी के महानुभाव सम्प्रदाय के इतिहास की अपनी सात सौ वर्षों अखंड परम्परा से उसकी प्राचीनता स्वयंसिद्ध है। इस सम्प्रदाय का सांकेतिक लिपियों में निबद्ध साहित्य तथा दार्शनिक विचार तो अपने मूल रूप में अविकृत रहे; परन्तु इस सम्प्रदाय के आद्य संस्थापक तथा इस सम्प्रदाय की अभिवृद्धि में योगदान करनेवाले सत्वशील आचार्य मात्र उपेक्षित रहे हैं। महाराष्ट्र के सांस्कृतिक इतिहास को बनाने में दत्तचित इन व्यक्तियों का जीवन चरित्र उनके कार्य का व्यापक स्वरूप तथा उनके आकलन शक्ति की भव्यता को अनुसंधाताओं ने अपने अध्ययन का विषय अब तक नहीं बनाया।

वारकरी सम्प्रदाय के प्रभाव-प्रचार से संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव आदि महान् भक्त कवियों का काव्य तो संकलित हुआ। इनके चरित्र एवम् कार्य का मूल्यांकन करने के कुछ प्रयत्न भी हुए।

---

१. "संत नामदेव": केसरी प्रकाशन, पूना, १९७०.

२. "नामदेव दर्शन": नामदेव समाजोन्नति परिषद, १९७०.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

महानुभाव पंथ का इतिहास तथा उसके सिद्धान्तों का नाथ पंथ एवं वारकरी सांप्रदायिकों से विरोध उसे अप्रिय एवं अध्ययन की दृष्टि से उपेक्षा का विषय भले ही बनाए; परन्तु भारत में जिस सम्प्रदाय का सार्वत्रिक प्रचार-प्रसार है, उस नाथ पंथ के आविर्भाव काल से संबंधित होने के कारण महानुभाव पंथ के इतिहास तथा साहित्य का परामर्श नितान्त अपरिहार्य सा हो जाता है।

एक तो मराठी सांस्कृतिक तथा साहित्य के इतिहास की अपूर्णता के कारण यह विषय मराठी में पूर्णतः परिचित नहीं हो पाया। हिन्दी माध्यम से प्रस्तुत किये गए अध्ययन इस दृष्टि से संतोषजनक नहीं हैं। उनकी आधारशिला एक तो मुख्यतः मराठी में पूर्ण-प्रकाशित साहित्येतिहास ग्रंथ ही रही हैं। ऐसे ग्रंथों में महानुभावीय साहित्य तथा परंपराओं का विवेचन अत्यंत त्रुटिपूर्ण है।

नाथ पंथ के प्रभावी खण्डनकार के रूप में महानुभाव साम्प्रदायिकों में आदिकाल से आचार्य दामोदर पण्डित का स्थान आदरणीय हैं। इनका साहित्य सांकेतिक लिपि में सुरक्षित एवं अविकृत रहा। नाथ पंथ के खण्डनार्थ रची गयी उनकी कृतियाँ हिन्दी में उपलब्ध हैं। नाथ सम्प्रदाय एवं हिन्दी साहित्य के आविर्भाव कालीन इतिहास के संदर्भ में अतीव लक्षणीय होते हुए भी दामोदर पण्डित के जीवन, काव्य तथा कार्यकर्तृत्व की ओर हिन्दी या मराठी अध्येताओं का विशेष ध्यान नहीं जा सका। हमारे इस अध्ययन में हम इसी अभाव की पूर्ति करने का प्रयास करेंगे।

आद्य हिंदी कवि

प्रायः आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवियों में अग्रणी होने का सम्मान वारकरी संप्रदाय के प्रभावी प्रचारक तथा अपनी पंजाब-यात्रा के कारण विशेष प्रसिद्ध संत नामदेव को दिया जाता है। संत नामदेव के कार्य का महत्त्व निश्चय ही अनन्यसाधारण है। महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों के इस ऐतिहासिक अनुसंधान में यथाक्रम हम संत नामदेव के महत्त्वकार्य का स्वरूप-विश्लेषण करनेवाले हैं। परंतु संत नामदेव की हिन्दी रचनाओं से पूर्व हिन्दी में रचना कर आद्य महाराष्ट्रीय हिन्दी कवि होने का सम्मान हम महानुभाव पंथीय आचार्य दामोदर पण्डित को देना नितान्त आवश्यक और उचित समझते हैं।

प्रस्तुत हिन्दी रचनाएँ केवल आद्य महानुवीय आचार्य के पाण्डित्यपूर्ण काव्य का परिचय देनेवाली ही नहीं, अपितु नाथ मत के खंडनार्थ नाथसांप्रदायिक शब्दावली से युक्त तथा तत्कालीन सिद्ध समाज में प्रचलित एवं जनप्रिय चर्यापदों की शैली में विरचित एक ऐसी महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक निधि है जिसका महाराष्ट्रीय

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

नाथसिद्ध कवियों के हिन्दी काव्य के इतिहास की प्राचीनता को स्पष्ट करने की दृष्टि से विशेष अध्ययन करना लाभदायक सिद्ध होगा।

दामोदर पण्डित का जीवनचरित्र निश्चित कर प्राचीन महानुभावीय मराठी साहित्य के अध्ययन के आधार पर उसे हिन्दी साहित्य के इतिहासवेत्ताओं के सम्मुख रखना एक आवश्यक ऐतिहासिक कर्तव्य है। इस दृष्टि से आचार्य दामोदर पण्डित का कार्य काल निर्धारित कर उनकी हिन्दी एवं हिन्दी-मिश्रित मराठी रचनाओं का अनुशीलन प्रस्तुत करना अपरिहार्य है।

ठोस प्रमाणों के आधार पर दामोदर पण्डित के जीवनचरित्र तथा हिन्दी रचनाओं का विवेचन कर हम आगे के पृष्ठों में यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि आचार्य दामोदर पण्डित ही आद्य महाराष्ट्रीय हिन्दी कवि रहे, हैं जिन्होंने महानुभाव-पंथ में श्री गुरु नागदेवाचार्य से दीक्षा ग्रहण की और महानुभाव ग्रंथ-प्रचार के हेतु तत्कालीन महाराष्ट्र में विद्यमान नाथपंथीय साधुओं से तत्वचर्चा कर नाथमत के खंडनार्थ हिन्दी में रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

आचार्य दामोदर पंडित : सांप्रदायिक माहात्म्य

महानुभाव-पंथ-संस्थापक महात्मा चक्रधर स्वामी के जीवनचरित्र–" लीलाचरित्र " का सूक्ष्मता से एवं गहराई से अध्ययन करने से उनका हिन्दी के साथ संपर्क होना तो प्रमाणित हो जाता है, परंतु महात्मा चक्रधर स्वामी के चौपदीगायन तथा कुछ संवादों में हिन्दी के प्रयोग के सिवा स्वतंत्र रूप से हिन्दी में रचना करने के संबंध में कोई भी प्रमाण आजतक उपलब्ध नहीं हुआ है।

महात्मा चक्रधर स्वामी के महानिर्वाण के बाद ३६ वर्ष तक जीवित रहनेवाले उनके एक प्रमुख शिष्य एवं आद्य महानुभावीय ग्रंथ-रचनाओं के प्रेरक श्री नागदेवाचार्य से प्रभावित आचार्य दामोदर पण्डित वास्तव में ऐसे पहले महानुभाव साधक कवि हैं, जिन्होंने हिन्दी में रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

आचार्य दामोदर पण्डित महानुभावों के विशेष मान्यता प्राप्त आदरणीय आचार्य थे। इनकी रचनाओं को महानुभाव पंथीयों में विशेष आदर दिया जाता है। महानुभाव पंथियों में दार्शनिक साधना- " अनुसर लिया मार्गिका "–के चार प्रमाण माने जाते हैं।

१. " सर्वज्ञांचे श्रीमुख ते श्रुतिः भटाचे वर्तमान ते स्मृति " अर्थात् सर्वज्ञ महात्मा चक्रधर स्वामी के मुख से निसृत दर्शनिक धारणाएँ श्रुति स्वरूप है, तथा भट अर्थात् श्री नागदेवाचार्य के साहित्य को " स्मृति " कहते हैं।

१. "वृद्धाचार "– अर्थात् महानुभाव पंथीय विदुषी रामेश्वर बाइसा से लेकर नागाइसातक के काल की घटनाओं का ज्ञान।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

३. "मार्गरूढी"– अर्थात् शिष्य ॐकार से लेकर गुर्जरबास तक के काल की घटनाओं का ज्ञान।

४. "स्मृति"– आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियाँ स्मृति रूप मानी जाती हैं।[1] इन चौपदियों में चर्चित "शास्त्र-विचार" पण्डित केशव आदि श्रेष्ठ महानुभावों का होने से तथा भटोबास (नागदेवाचार्य) की इसे मान्यता संप्राप्त होने से इनका महत्त्व अनन्यसाधारण माना गया है। स्वयं आचार्य दामोदर पण्डित ने चौपदियों की समाप्तिमुद्रा में अत्यन्त आत्मविश्वासपूर्वक कहा है कि,

एवं ते रोवी चौपदी परमप्रमाण।
स्मृतिरूप बोलिजे।"

अर्थात् इस प्रकार की ये चौपदी छंद की रचनाएँ परमप्रमाण हैं। इन्हें साक्षात् स्मृतिरूप समझिए।

महानुभाव सांप्रदायिकों के द्वारा सम्मानित एवं सांकेतिक लिपि में लिखी जाने से अधिकृत रूप में सुरक्षित आचार्य दामोदर पण्डित की कुल साठ चौपदियाँ उपलब्ध हैं। इनमें से पचीस तो संपूर्ण हिन्दी भाषा में रची गई हैं, तथा अन्य पैंतीस चौपदियों की मराठी भाषा पर हिन्दी का सुस्पष्ट प्रभाव ज्ञात होता है, जिसकी चर्चा हमने आगे के पृष्ठों में सप्रमाण प्रस्तुत की है।

आचार्य दामोदर पण्डित : दीक्षा-काल

आचार्य दामोदर पण्डित के जन्मस्थान एवं जन्म वर्ष के संबंध में निश्चयपूर्वक आज तो कुछ नहीं कहा जा सकता, परंतु शक १२०९ के[2] आसपास जब श्री नागदेवाचार्य रिद्धपूर से गोदावरी नदी के तट पर बसे हुए "निंबा" नामक गाँव में आकर बस गए, तब उनसे दामोदर पण्डित तथा उनकी विदुषी पत्नी हिराइसा का संपर्क स्थापित हो गया।[3]

---

१. "अन्वयस्थल", परिच्छेद २.

२. शक अर्थात् शालिवाहन शक। महाराष्ट्र में प्रचारित कालगणना। ईसाई कालगणना और शालिवाहन कालगणना में ७८ वर्षों का अंतर स्थूलरूप से मान्य किया गया है।

३. डॉ. वि. भि. कोलते : संपा. 'दामोदर पण्डित विरचित वछाहरण' अरुण प्रकाशन, मलकापूर, १९५३, प्रस्तावना पृ. २०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

श्री नागदेवाचार्य के उपदेशों के परिणामस्वरूप दोनों पति-पत्नी महानुभाव पंथ की दार्शनिक विचारधारा के प्रति आकृष्ट हुए। श्री नागदेवाचार्य से ही दोनों ने महानुभाव पंथ की दीक्षा ग्रहण की। यथा,

"तयां दोघां भटोवासा पासौनि श्रवण"[१]

अर्थात् (दामोदर पण्डित और उनकी पत्नी) दोनों को भटोवास (श्री नागदेवाचार्य) से उपदेश एवं दीक्षा प्राप्त हुई। महानुभावीय मराठी साहित्य के विख्यात अनुसंधाता विद्वान डॉ. य. खु. देशपांडेजी यह घटना शक ११९४ में घटित हुई बताते हैं।[२]

"स्मृतिस्थल" ग्रंथ में उल्लिखित व्यक्तित्व-विशेष

आचार्य दामोदर पण्डित की पत्नी हिराइसा के संयमी स्वभाव की एक कहानी, श्री नागदेवाचार्य के जीवन चरित्रपरक संकलन-ग्रंथ 'स्मृतिस्थल" में प्राप्त होती है। एक दिन श्री नागदेवाचार्य इन दोनों पति-पत्नी की भेंट लेने के हेतु उनके घर पधारे। इस समय पण्डितजी की कन्या अतीव बीमार थी और उसके बचने की कोई आशा नहीं थी। गुरुदेव के आगमन के अनंतर दोनों पति-पत्नी ने अद्भुत संयम के साथ उनका स्वागत कर उनके लिए स्वादिष्ट भोजन की तैयारियाँ कीं। इधर भोजन आरंभ हुआ और उधर कन्या का देहान्त हुआ। दोनों पति-पत्नी अत्यंत संयम के साथ गुरुदेव से वार्तालाप करते रहे। स्वागतकार्य पूर्ण होने के अनंतर अपनी कन्या के शव का आवरण हटाकर हिराइसा शोक करने लगी।[3]

इस शोकपूर्ण घटना के पश्चात् हिराइसा की जीवन के प्रति विरक्ति अधिक दृढमूल हो गई और उसने अपने पतिदेव से कहा,

"पण्डितोः तुम्ही भीक्षा कराः का मज करूं देया"[४]

अर्थात् पण्डितजी, आप अन्न भिक्षा माँगने का कार्य आरंभ करें। अगर आप नहीं करना चाहते तो मुझे ऐसा करने की आज्ञा दें।

---

१. वा. ना. देशपांडे : 'स्मृतिस्थळ', व्हीनस प्रकाशन, पुणे, द्वि. सं. १९६०, पृष्ठ ५४, क्र. १६.

२. डॉ. यशवंत खुशाल देशपांडे : 'महानुभावीय मराठी वाङ्मय' व्हीनस प्रकाशन, पुणे. द्वि. सं. जनवरी १९६०, पृष्ठ १८.

३. "स्मृतिस्थळ", पृष्ठ ७९,

४. तत्रैव पृष्ठ ५४.

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस पर पण्डितजी ने उसे उत्तर दिया,

"तुम्ही करा: मी पुत्राचा विवाहो करीन: मग भीक्षा करीन: तुम्ही जा"[१]

अर्थात् 'तुम भिक्षा माँगकर विरक्त जीवन स्यापन कर सकती हो। मैं अपने पुत्र का विवाह-कर्म निबट लेता हूँ। फिर मैं भी भिक्षा माँगूँगा। तुम जा सकती हो। (विरक्त हो सकती हो।)'

पण्डितजी ने अपनी पत्नी को उदारतापूर्वक पारिवारिक जीवन से मुक्त कर पुत्र के विवाह का उत्तरदायित्व ग्रहण कर यथावकाश उसे पूर्ण किया। अपने पति से आज्ञा प्राप्त कर हिराइसा श्री नागदेवाचार्य के आश्रम में संन्यासिनी बनकर रह गई। आचार्य दामोदर पण्डित परिवार से तुरंत नाता न तोड़ सके। पुत्र-विवाह के पश्चात् पत्नी हिराइसा ने उन्हें अपने वचन का स्मरण कराया,

"जीय चुलीची खीर खादली
तिये चुलीची काइ राख खाल।"

अर्थात् जिस चूल्हे से खीर पकाकर खाई, क्या उसी चूल्हे की रक्षा भी खाओगे?"[२]

इस कठोर वाक्प्रहार से पण्डितजी संभल गये। वह गुरु श्री नागदेवाचार्य के यहाँ पहुँचे। गुरु ने उनका उचित स्वागत किया और आचार्य दामोदर पण्डित भिक्षा माँगने लगे अर्थात् बिरक्तिपूर्ण जीवन स्यापन करने लगे।

संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित

अपने पूर्व-जीवन में संस्कृत ग्रंथों का आलोडन कर आचार्य दामोदर पण्डित ने एक विद्वान के रूप में ख्याति अर्जित की थी। उनको संस्कृत भाषा में वार्तालाप करने का अच्छा अभ्यास भी था और शौक भी। श्री नागदेवाचार्य के दूसरे एक प्रमुख शिष्य केसोबास को भी संस्कृत के प्रति गहरा आकर्षण था। केसोबास तथा आचार्य दामोदर पण्डित में दृढ़ स्नेह-बंध निर्माण हो गया। एक दिन दोनों ने गुरु से संस्कृत भाषा में कुछ प्रश्न उपस्थित किए। तब गुरु श्री नागदेवाचार्य ने कहा,

"पण्डिता : केशवदया : तुमचा अस्मात्
कस्मात् मीं नेणे मा : मज श्री चक्रधरें
निरूपिली मऱ्हाटी : तियाची पुसा"[३]

---

१. "स्मृतिस्थळ". पृष्ठ ५४,
२. "स्मृतिस्थळ", पृष्ठ ५८,
३. "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ ६६.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अर्थात् दामोदर पण्डित और केशवदेव (केसोबास) तुम सुनो! तुम्हारी यह अस्मात्-कस्मात् वाली संस्कृत भला क्या जानूँ! मेरे गुरु महात्मा श्री चक्रधर-स्वामी ने मुझे अपनी मराठी भाषा में तत्त्व समझाया है। उसी अपनी बोली में बोलो!"

उसी दिन से आचार्य दामोदर पण्डित तथा केसोबास के मन में जनसाधारण की बोली मराठी भाषा के प्रति विशेष आत्मीयता का भाव निर्माण हुआ और दोनों मराठी में व्यवहार करने लगे।[१]

आचार्य दामोदर पण्डित को संस्कृत के साथ साथ मराठी पर भी अच्छा खासा प्रभुत्व प्राप्त था। इसीसे गुरु ने उन्हें यह प्रशंसा-पत्र दिया,

"केशवदेयासि संस्कृती सरळि:
आणि पण्डितासि संस्कृति मऱ्हाटिया सरळि"[२]

अर्थात् 'केशवदेव (केशोबास) के लिए संस्कृत सरल है और दामोदर पण्डित के लिए संस्कृत के साथ साथ मराठी भी सरल है।'

मराठी एवं हिन्दी के प्रति प्रेम

वास्तव में आचार्य दामोदर पण्डित के लिए संस्कृत एवं मराठी ही नहीं वरन् हिन्दी भाषा भी सरल रही। उनका हिन्दीपर केवल अधिकार ही नहीं उन्हें हिन्दी से प्रेम भी था। इसीलिए उन्होंने हिन्दी में रचनाएँ कीं, इतनाही नहीं उनकी मराठी चौपदियों में भी सहज रूपसे हिन्दी समाविष्ट हो गई हैं।[3]

गुरु श्री नागदेवाचार्य के सान्निध्य में आकर आचार्य दामोदर पण्डित ने महानुभाव पंथ के आचार-विचारों का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया। श्री नाग-देवाचार्य, केसोबास तथा दामोदर पण्डित में सदैव शास्त्रार्थ एवं चर्चाएँ होती रहती थी।[४] आचार्य दामोदर पण्डित को तो शास्त्र-चर्चा का अतीव आकर्षण रहता था। उनकी इस चर्चा-प्रियता के अनेक प्रसंग "स्मृतिस्थळ" में वर्णित हैं।[५] स्वयं नागदेवाचार्य ने उनकी इस प्रवृत्ति की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है।

---

१. डॉ. वि. भि. कोलते : संपा. "वछाहरण", पृष्ठ ३२.

२. "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ ८८.

३. इस दृष्टि से रचना खंड की चौपदियाँ क्रमांक २, ३, ४, ५, ६, १६, १७ लक्षणीय हैं।

४. "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ १२४, २४४.

५. "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ २५३.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

" माझें शास्त्र म्हाईभटा – लक्ष्मीधर
भटाचेनि नुजळेचिः तें पण्डिता-केशोदेयांसि
चर्चा करीता उजळले "[१]

अर्थात् 'हे म्हाइंभट, लक्ष्मीधर से चर्चा कर। मेरा "शास्त्र-ज्ञान" अधिक पक्का नहीं होता। परंतु दामोदर पण्डित तथा केशवदेव से चर्चा करने से मात्र वह पक्का हो जाता है।'

गुरु की इस प्रशंसा के बावजूद आचार्य दामोदर पण्डित अत्यंत विनम्र स्वभाव के व्यक्ति थे। अपने ज्ञान के प्रति कोई गर्व उनमें विद्यमान नहीं था। उनका कथन है,

" भटो : मज इतुकें दीवस यैसें होते
जें मीं तुमचीये मार्गीचें अवघेचि जाणे:
परि आतां यैसें जालें ये मार्गीचें
काहीचि नेणे " [२]

अर्थात्, "गुरुजी, तुमने आजतक जो कुछ मुझे बताया है वही मैं बोलता हूँ। अधिक तो मेरे पास कुछ है नहीं। और अब तो लगता है, आपने जो भी कुछ मुझे सिखाया उसे भी मैं पूर्णतया नहीं जान सका हूँ।"

इस विनम्र स्वभाव के बावजूद आचार्य दामोदर पण्डित में महानुभावीय दर्शन के प्रति अनन्य निष्ठा तथा अभिमान का भाव था। इसीसे उन्होंने अनेकों से वादविवाद की चुनौती भी ग्रहण की। अपने प्रभावकारी वाक्पटुत्व से तथा अद्भुत व्यक्तित्व से उन्होंने अनेकों को महानुभावीय दर्शन के प्रति आकृष्ट किया था।[३] उनका संगीत पर भी विशेष अधिकार होने से वह अपनी रचनाएँ सुरीले स्वर में गाकर श्रोताओं को अभिभूत कर देते थे। उनकी हिन्दी चौपदियाँ तो ऐसे ही वादपटुत्व से अद्भुत हुई हैं, जिनपर आगे चलकर विशेष चर्चा हम प्रस्तुत करनेवाले हैं।

---

१. तत्रैव पृष्ठ ६८.

२. "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ ६७.

३. डॉ. वि. भि. कोलते : संपा. "वछाहरण" प्रस्तावना २४–२५.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संगीतज्ञ रचनाकार

वास्तव में श्री चक्रधर स्वामी के उपदेशों के अनुसार महानुभावसाधकों के लिए गायन निषिद्ध है। इसीसे एक समय गुरु श्री नागदेवाचार्य ने आचार्य दामोदर पण्डित को गायन करने पर निर्बंध लगाया था।[१] परन्तु दूसरे एक भावपूर्ण प्रसंग में यह निर्बंध स्वयम् गुरु ने ही हटा किया। विजन एकान्त में चिन्तन करनेवाले पण्डित एक दिन सहज उत्स्फूर्त स्वरों में गायन करने लगे – जिसका आशय था, "बच्चा जैसे अपनी माँ के लिए लालायित होकर रो देता है; ठीक वैसेही हे परमेश्वर, मैं तुम्हारे वियोग में व्याकुल हो गया हूँ। तुम्हीं बताओ मुझसे ऐसा कौनसा अपराध हुआ है कि, तुम मुझे दर्शन तक नहीं देते !" यह भावपूर्ण गायन स्वयं श्री नागदेवाचार्य ने श्रवण किया और वे लुब्ध हो गए। उन्होंने तुरन्त कहा, "पण्डित, तुम आजसे पुन: गायन करो। तुम्हें अनुज्ञा है।"[२] संकलित चौपदियों में कुल चौदह रागों के पद मिलते हैं। इन रागों के नाम और चौपदी-क्रम इस प्रकार है--धनाश्री (१–३५), रामग्री (२३, २५, २९, ३२, ३३) ललित (९) भैरव (१२, १७) भूपाली (१४, २१, ४७) मंगल कौशिक (१६) गौडी (१८, ४८, ५४) तुंडी (१९) वेलाउली (२०), देशीकु (२४, ३६), रेवागवितु (३०) कानडा (३७, ४५), नट्टु (४१), कल्याण (४६)।

आचार्य दामोदर पण्डित का मराठी ग्रन्थकर्तृत्व

गायनकला के साथ साथ आचार्य दामोदर पण्डित काव्यकला के भी मर्मज्ञ पण्डित थे। सहज उत्स्फूर्त गीत-गायन कर वह श्रोतृसमाज को अभिभूत करते थे। उनके ऐसे पद "धुव्वा" कहलाते हैं। संगीत के ध्रुपद भी भक्तिभाव से परिपूर्ण होते हैं। आचार्य दामोदरपण्डित के ये धुव्वापद गेयता से भी संपन्न थे और भक्तिभाव से भी सराबोर थे। 'स्मृतिस्थळ' में ऐसी अनेक कथाएँ दी गई हैं, जिनसे आचार्य दामोदरपंडित के धुव्वापदों का महत्त्व और प्रभाव ज्ञात होता है।

"प्रात:सुप्तोत्थित:" नामक संस्कृत स्तोत्र, "रुद्धपूर लीला स्तोत्र", "नामावली स्तोत्र", "मंगलमूर्ति भक्त दृष्टी निहाळीती" नामक आरती, जैसी स्फुट रचनाओं के अतिरिक्त भागवत के दशम स्कंध की कथा पर आधारित "वछाहरण" ग्रन्थ एवं विभिन्न राग रागिनियों में रचित कुल साठ चौपदियाँ उन्होंने लिखी हैं।

---

१. "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ ८९.

२ "स्मृतिस्थळ" पृष्ठ ९०.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

वछाहरण अथवा "वत्साहरण" का प्रसंग भागवत (दशमस्कंध अध्याय १२ से १४), पद्मपुराण (उत्तर खण्ड अध्याय २४५) तथा ब्रह्मवैवर्तपुराण (खण्ड ५, अध्याय २०) इन तीन ग्रन्थों में प्राप्त होता है। भागवत में यह कथा विशेष विस्तार के साथ उपलब्ध है। इसीलिए आचार्य दामोदर पण्डित ने अपनी रचना के लिए भागवत का ही अधिक आधार ग्रहण किया है।

भागवत के दशम स्कंध के बारहवें अध्याय में अघासुर वध का प्रसंग है। तेरहवें अध्याय में वत्साहरण की घटना आयी है। चौदहवें अध्याय में ब्रह्मदेव का गर्वहरण तथा उसके द्वारा की गई श्रीकृष्ण प्रशंसा प्राप्त होती है। इन तीन प्रसंगों को एकत्रित कर पण्डितजी ने एक सुन्दर कथा-काव्य की निर्मिति की है। मराठी के आद्य ग्रन्थों में काव्यकौशल एवं महानुभाव दर्शन के स्पष्टीकरण की दृष्टि से इस ग्रन्थ को विशेष सन्मान प्राप्त है।

कुल छः भागों में विभक्त यह काव्य ५०३ ओवी छंदों में वर्णित है। महानुभावीय साहित्य के अनुसंधाता विद्वान् डॉ. वि. भि. कोलतेजी ने इस आदिकालीन मराठी ग्रन्थ का विस्तृत प्रस्तावना एवं टिप्पणियों के साथ संपादन किया है।[१]

डॉ. वि. भि. कोलतेजी के अनंतर नई पीढ़ी के मराठी शोधकर्ताओं में प्रा. सुरेश डोळके महोदय का कार्य उल्लेखनीय है। आपने अपने महत्वपूर्ण अनुसंधानों से महानुभावीय साहित्य के शोध को नई दिशा देने का प्रयत्न किया है। आपके मतानुसार "वछाहरण" का वास्तविक नाम "वत्साहरण" ही है और उसकी रचना दामोदर पण्डित के अंतरंग मित्र "केशिराज मुनि" ने की है। प्रा. डोळके महोदय को प्राप्त छः हस्तलेखों के आधार पर उन्होंने अपने महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष दो मराठी शोध निबंधों में स्पष्ट किए हैं।[२/३]

प्रा. डोळके महोदय ने अपना अनुसंधान सप्रमाण प्रस्तुत किया। उनके कथन का खण्डन भी अनेकों ने किया। प्रा. डोळके महोदय का कथन अगर सत्य

---

१. डॉ. वि. भि. कोलते : संपादक, दामोदर पण्डित विरचित "वछाहरण" अरुण प्रकाशन, मलकापूर, प्र. सं. १९५३.

२. "वत्साहरण काही विचार" : महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका, महाराष्ट्र साहित्य परिषद प्रकाशन, वर्ष ३१, अंक १२३, ऑक्टो. –डिसेंबर, १९५७

३. "वत्साहरणा" तील काव्य : एक मूल्यमापन" : महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका, वर्ष ३२, अंक १२४, जाने. फेब्रु. मार्च. १९५८.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

सिद्ध होता है तो आचार्य दामोदर पण्डित मुख्यतः हिन्दी कवि प्रमाणित हो जाते हैं। कारण, उनके नाम पर प्रमुख मराठी रचना "वत्साहरण" के अतिरिक्त दूसरी नहीं प्राप्त होती। और हिन्दी चौपदियों की रचना उन्हीं के द्वारा रचित होने के संबंध में किसी प्रकार के मतभेद के लिए गुंजाइश नहीं हैं।

आचार्य दामोदर पण्डित : निधन शक

"वछाहरण" का रचनाकाल डॉ. य. खु. देशपांडे जी शक १२०० के आसपास बताते हैं।[१] डॉ. वि. भि. कोलतेजी ने तत्कालीन महानुभाव आचार्यों के जीवन-क्रम एवं अन्य सांप्रदायिक आधारों की खोजबीन कर शक १२३८ में "वछाहरण" की रचना का होना प्रमाणित किया है।[२]

एक तथ्य निश्चित है कि गुरु श्री नागदेवाचार्य, और उनके शिष्य केसोबास तथा आचार्य दामोदर पण्डित समकालीन व्यक्ति थे। केसोबास के वियोग से दुःखी होकर आचार्य दामोदर पण्डित द्वारा "वछाहरण" की रचना करने के संबंध में सांप्रदायिक विश्वास है। केसोबास द्वारा विरचित "मूर्तिप्रकाश" की रचना शक १२१० में होने के संबंध डॉ. कोलतेजी ने प्रमाण दिए हैं।[3] केसोबास तथा आचार्य दामोदर पण्डित की मृत्यु को लेकर "लीला चरित्र" के "इतिहास प्रकरण" में एक और प्रमाण मिलता है। यथा,

> "मग भटांउपरि आइदेवबासांचे ती वर्षा देहावसान जालें :
> आइदेवबासांउपरि वर्षा एक केशोबासाचे देहावसान जालें :
> केसोबासांउपरि सा मासा पण्डिताचे देहावसान जालें :[४]

सांप्रदायिक विश्वास के अनुसार भट (अर्थात् नागदेवाचार्य) का देहावसान शक १२२४ में हुआ।[५] डॉ. वि. भि. कोलतेजी तत्कालीन राजा रामदेवराय यादव के राज्यकाल के संबंध में तथ्यों का विचार कर निर्णय देते हैं कि भटोबास अथवा नागदेवाचार्य की मृत्यु का शक १२३३ या १२३४ ही हो सकता है।[६]

---

१. डॉ. यशवंत खुशाल देशपांडे, : "महानुभावीय मराठी वाङमय" पृष्ठ ३०.
२. वि. भि. कोलते, : संपादक "वछाहरण", प्रस्तावना पृष्ठ ३२-३६.
३. वि. भि. कोलते, संपादक : "मूर्तिप्रकाश", प्रस्तावना पृष्ठ २८-३१.
४. डॉ. य. खु. देशपांडे, "महानुभावांचे चरित्र ग्रंथ"
भारत इतिहास संशोधक मंडल त्रैमासिक वर्ष १३, अंक २, पृष्ठ ५१.
५. वा. ना. देशपांडे, संपादक : "स्मृतिस्थळ"
६. वि. भि. कोलते, संपादक : "वछाहरण" प्रस्तावना पृष्ठ ३५.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इन लक्ष्यों के आधार पर "लीला चरित्र" के "इतिहास प्रकरण" के प्रमाण का अर्थ इस प्रकार लिया जा सकता है–

"भट (नागदेवाचार्य की) मृत्यु के अनंतर शक १२३६ या १२३७ में बाइदेवबास की मृत्यु हुई। शक १२३८ या १२३९ में केसोबास की मृत्यु हुई और शक १२४० के लगभग आचार्य दामोदर पण्डित का देहावसान हुआ।"

आचार्य दामोदर पंडित की हिन्दी रचनाएँ

महानुभाव पंथीयों ने आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी चौपदियों को अपने "शास्त्रविचार" में अतीव सम्मानपूर्वक रखा है। इन हिन्दी चौपदियों में नाथमत का प्रभावी खंडन तथा महानुभावीय सिद्धान्तों का परिणामकारण मंडन होने से सांप्रदायिकों ने विशेष अभिमान के साथ इन्हें सुरक्षित तो रखा ही, परंतु इन्हें साक्षात् "स्मृति" स्वरूप भी माना है। सांप्रदायिकों की यह असीम श्रद्धा इस वचन में द्रष्टव्य है।–

"सर्वज्ञांचे श्रीमुख ते श्रुतिः भटाचे वर्तमान ते स्मृतिः [1]

सर्वज्ञ अर्थात् महानुभाव पंथ–संस्थापक महात्मा श्री चक्रधर स्वामी के श्रीमुख से निसृत उपदेश वाणी पंथीयों के लिए "श्रुति" स्वरूप पवित्र है। भट अर्थात् श्री नागदेवाचार्य के प्रमुख शिष्य आचार्य दामोदर पण्डित द्वारा कथित दर्शन साक्षात् "स्मृति" स्वरूप प्रमाण है।

स्वयम् आचार्य दामोदर पण्डित के मन में भी अपनी रचनाओं की सामर्थ्य पर सार्थ अभिमान प्रतीत होता है। चौपदियों की समाप्तिमुद्रा में वाक्य है,

एवं ते वोवी चौपदी परम प्रमाणः स्मृतिरूप बोलिजे।

अर्थात् ये चौपदी रचनाएँ सांप्रदायिकों के लिए परमप्रमाण हैं। इन्हें स्मृतिरूप समझना चाहिए।

आचार्य दामोदर पंडित की हिन्दी रचनाओं का काल

आचार्य दामोदर पण्डित के जीवन-चरित्र का विश्लेषण करते हुए ऊपर हमने कुछ लक्ष्यों का निर्देश किया है। संक्षेप में ये पूर्व प्रमाणित लक्ष्य इस प्रकार हैं,

१. आचार्य दामोदर पण्डित का निश्चित जन्म शक यद्यपि अज्ञात है, फिर भी उनका निधन शक १२४० के आसपास निश्चित हो जाता है।

---

१. डॉ. वि. भि. कोलते, संपादक : 'अन्वयस्थळ', महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका अंक १०६, इ. स. १९५३

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

२. आचार्य दामोदर पण्डित की मराठी प्रौढ रचना "वछाहरण" शक १२३८ में पूर्ण हुई।

३. आचार्य दामोदर पण्डित की उपरोक्त प्रौढ दार्शनिक रचना के लेखन के पूर्व लगभग तीस वर्षों से वे महानुभाव पंथ से संबंधित हो गए थे। यथा : कवि के गुरु श्री नागदेवाचार्य से उन्होंने शक १२०९ में महानुभाव पंथ की दीक्षा ग्रहण की थी।

४. आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाओं का मूलभूत उद्देश्य महानुभाव पंथीय सिद्धान्तों का मण्डन तथा नाथ सांप्रदायिक मतों एवं आचारों का खण्डन करना था। ये रचनाएँ "प्रसंगोपात" अर्थात् श्री नागदेवाचार्य की आज्ञानुसार उन्हें रचनी पड़ी।

आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाओं के संवंध में अब यहाँ एक और महत्त्वपूर्ण सांप्रदायिक प्रमाण द्रष्टव्य है। सीधाते हरिबास तथा धाकुदे सोंगोबास नामक सांप्रदायिकों द्वारा रचित "अन्वयस्थळ" के चौथे परिच्छेद में यह उल्लेख प्राप्त है—

"प्रस्तावयानुरूप एकेक काळी ६० साटि चौपदिया केलीया"[१]

अर्थात् प्रस्ताव का अनुसरण करते हुए किसी समय दामोदर पण्डित ने ६० चौपदियों की रचना की है।

आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियों की समाप्ति-मुद्रा में लिपिक के द्वारा किया गया उल्लेख इस प्रकार प्राप्त है–

"तयाची प्रसंसा भटोबासी केली"

अर्थात् 'गुरु श्री नागदेवाचार्य ने इन रचनाओं की प्रशंसा की।'

इससे स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाएँ श्री नागदेवाचार्य की मृत्यु होने के पूर्व लिखी गई थी। सांप्रदायिकों की मान्यता के अनुसार श्री नागदेवाचार्य का मृत्यु शक १२२४ माना जाता है। डॉ. कोलते महोदय इसे शक १२३४ मानते हैं।[२]

---

१. डॉ. वि. भि. कोलते : संपादक "अन्वयस्थळ"
महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका, अंक १०६, १९५३.

२. डॉ. वि. भि. कोलते : 'वच्छाहरण' प्रस्तावना

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इससे दूसरा स्वाभाविक निष्कर्ष यह निकलता है कि आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाएँ शक १२२४ अथवा अधिक से अधिक १२३४ के पूर्व ही लिखी गयी थीं।

आचार्य दामोदर पंडित तथा संत नामदेव

आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाओं काल–निर्णय करने के उपरान्त अब आद्य महाराष्ट्रीय हिन्दी संत कवि के रूप में सुविख्यात संत नामदेव की हिन्दी रचनाओं के रचना काल का तुलनात्मक विचार करना समीचीन होगा।

संत नामदेव का विद्वन्मान्य काल शक ११९२ से १२७२ तक निश्चित है। मराठी अनुसंधाताओं में इस संबंध में विशेष मतभेद नहीं है।[१]

अपने जीवन के उत्तरार्ध में संत नामदेव महाराष्ट्र से पंजाब में गए। वहीं उनका अठारह वर्षों तक निवास होने के संबंध में प्राय: सभी विद्वानों में एकमत हो जाता है। संत नामदेव के मृत्यु संवत का विचार करते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि, वे शक १२५४ के करीब पंजाब में जा पहुँचे[२] होंगे। इससे पूर्व महाराष्ट्र में उनके द्वारा रचित मराठी अभंग विपुल संख्या में प्राप्त हैं। पंजाब में जाने से पूर्व उनके द्वारा हिन्दी में रचनाएँ करने के संबंध में निश्चित प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अत: यह कहना पड़ता है कि संत नामदेव की हिन्दी पदावली उनके उत्तरी भारत की यात्रा के दरमियान रची गयी है। अर्थात् शक १२५४ से १२७२ के बीच उनकी हिन्दी रचनाओं का काल निर्धारित किया जा सकता है।[३]

आचार्य दामोदर पण्डित यद्यपि संत नामदेव से पूर्व नहीं, परंतु वे नामदेव के ज्येष्ठ समकालीन रहे हैं। उनकी हिन्दी रचनाओं के काल को निर्धारित करते हुए हमने यह सप्रमाण स्पष्ट किया है कि उनकी हिन्दी वाणी शक १२३४ के पूर्व की है।[४]

---

१. डॉ. शं. गो. तुळपुळे : "पाँच संत कवि" व्हीनस प्रकाशन, पूना. द्वि. सं. १९६२, पृष्ठ १३३.
२. डॉ. रा. चिं. ढेरे : "नामदेवांची समाधी" ("श्री नामदेव दर्शन") नामदेव समाजोन्नति परिषद, पूना, १९७०, पृष्ठ १८७.
३. डॉ. रा. चिं. ढेरे, डॉ. अशोक कामत : "नामदेव एक विजय यात्रा", विश्वकर्मा साहित्यालय, पूना, १९७० पृ. १०१
४. डॉ. अशोक कामत : महाराष्ट्र के नाथ पंथीय कवियों का हिंदी काव्य, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, पृष्ठ १४२-१४५.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

इससे यह पुनः प्रमाणित हो जाता है कि संत नामदेव से पूर्व आचार्य दामोदर पण्डित ने हिन्दी में रचनाएँ प्रस्तुत की थीं।

आचार्य दामोदर पण्डित ही वास्तव में ऐसे कवि हैं, जिन्हें आदिकालीन महाराष्ट्रीय हिन्दी कवि मानना चाहिए।

आचार्य दामोदर पण्डित द्वारा रचित समस्त साठ चौपदियों के प्रथम प्रकाशन का श्रेय महानुभाव सांप्रदायिक महंत श्री दत्तनाथजी को देना आवश्यक है। इन्होंने पेशावर में प्राप्त हस्तलेखों के आधार पर लाहौर से इन चौपदियों को महानुभाव सांप्रदायिकों के नित्यपठनार्थ प्रचारित किया था। [१]

दत्तनाथजी को प्राप्त पोथी में इन चौपदिओं के सात " प्रकारणोंका " वर्गीकरण भी " सरवळे " इस पारिभाषिक शीर्षक के अन्तर्गत प्राप्त होता है। [२]

प्रथम आगन निगम हठयोगादि अंतर आह्च साधनें साधका
सहित साध्याची व्यावृत्ति निरोपण ॥ १५ ॥
परज्ञान आचार उपदेशपूर्वक साधन साधक प्रसंसा निरोपण॥ १३ ।
॥ २ चौ. ॥ २८ ॥
परज्ञान आचार नावरतां संसार तम प्राप्त निरोपण ॥ २ ॥
॥ ३ ॥ चौ. ३१ ॥
संहारोणी पुनः संसरणी पड़ती
तत्कार्य निरोपण ॥ १० ॥ प्र. ४ ॥ चौ. ४० ॥
परज्ञानोपदेशें सकळ पदार्थ विवेक विचार
निरोपण ॥ १० ॥ प्र. ५ ॥ चौ. ५ ॥ चौ. ५० ॥
परज्ञान विचारपूर्वक उद्धरल्याचा
साध्यभेद निर्देश
ध्वंशनिरोपण ॥ ७ ॥ प्रकरण ॥ ७ ॥ चौ. ॥ ६० ॥
इति चौपदी प्र. सरवळा समाप्त ॥ [3]

---

१. डॉ. य. खु. देशपांडे, महानुभावीय मराठी वाङ्मय : व्हीनस प्रकाशन, पूना, द्वि. सं. १९६०, पृष्ठ ३८.

२. डॉ. य. खु. देशपांडे : " महानुभावीय मराठी वाङ्मय " पृष्ठ ३८.

३. तत्रैव : पृष्ठ ३८.

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इसका सुबोध स्पष्टीकरण प्रकरणश: इस प्रकार दिया जा सकता है–

चौपदी प्रकरण एक

इसमें कुल १ से १५ चौपदियाँ मिलती हैं। इसमें से संख्या १, २, ३, ४, ५, ७, १४ तथा १५ हिन्दी में रचित हैं।

संख्या ६, ८, ९, १०, ११, १२ तथा १३ मराठी में रचित हैं।

" इतर साधन साधक साध्य व्यावृत्तिपूर्वक पर साधन साधकादि मार्ग प्रसंसा चौपद निरूपण "–अर्थात् अन्य साधकों की साधनापद्धति संबंधी विचार विमर्श करने के हेतु इस प्रकरण की रचना हुयी है।

व्याखयाकारों ने इस प्रकरण को शीर्षक देते हुए 'आगमनिगम हटयोगादि अंतर बाह्य साधने : साधकासहित साध्याची आवृत्ति' इस प्रकार मूल शीर्षक में सुबोधता लाने का प्रयास किया है।

चौपदी प्रकरण दो –

इसके अंतर्गत १६ से २८ तक कुल १३ चौपदियाँ प्राप्त हैं। संख्या १७, १८, १९, २०, २२, २३, २५, २६, २७, २८ हिन्दी में हैं।

संख्या १६, २१, २४ मराठी में रचित हैं।

इस प्रकरण का शीर्षक है –" उपदेश पूर्वक आचर बोधित साध्ये प्रसंसा निरुपण: "

चौपदी प्रकरण तीन –

इस प्रकरण २९ तथा ३० ये दो ही चौपदियाँ अंतर्भूत हैं। पहली मराठी में तथा दूसरी हिन्दी में रची गई है। इनका शीर्षक है – " निहिताचार नाचरता: तनसंहार प्राप्ति निरुपण: "

चौपदी प्रकरण चार –

इस प्रकरण में संख्या ३१ से ४० तक कुछ १० चौपदियाँ प्राप्त हैं, जिनमें से एक का अपवाद छोड़कर सभी मराठी में रची गई हैं। केवल संख्या ३५ वीं चौपदी हिन्दी में मिलती है। इस प्रकरण का शीर्षक है, " पृछापूर्वक संसरण निरुपण "।

चौपदी प्रकरण पाँच –

संख्या ४१ से ५० तक। इसमें कुल दस चौपदियाँ समाविष्ट हैं। संख्या ४१, ४२ तथा ४४ वीं चौपदियाँ हिन्दी में रचित हैं।

संख्या ४३, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९ तथा ५० मराठी में रचित हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'उपदेश सासन पूर्वक निज बीजपर्यंत सकळ विचार ज्ञान निरुपण:' शीर्षक मे इस प्रकरण के विषय का सूचित किया गया है।

चौपदी प्रकरण छः –

इस प्रकरण के अन्तर्गत संख्या ५१ से ५३ तक केवल तीन चौपदियाँ हैं। "महाकाव्य निरुपण" करनेवाली ये चौपदियाँ मराठी में रचित हैं।

चौपदी प्रकरण सात –

इस अंतिम तथा सातवें प्रकरण के अन्तर्गत संख्या ५४ से ६० तक कुल सात चौपदियाँ संकलित हैं, जिनमें से संख्या ५५ तक ५६ हिन्दी में रचित हैं। अन्य संख्या ५४, ५७, ५८, ५९ तथा ६० मराठी में रचित हैं। इन चौपदियों के विषय को "उद्धरण साध्य भेद निरुपण" शीर्षक से व्यक्त किया गया है।

चौपदियों की भाषा का स्वरूप

महानुभाव पंथ संस्थापक महात्मा चक्रधर स्वामी स्वयं मराठी भाषा के अभिमानी थे। "सामान्य परिवारु नागवेल" अर्थात् सर्वसाधारण व्यक्ति केवल भाषा की दुरुहता के कारण दर्शन–ज्ञान से वंचित न रहे–ऐसा उनके शिष्य नागदेवाचार्य का कथन है। "संस्कृति मऱ्हाटिया सरळि" अर्थात् मराठी भाषा संस्कृत की तुलना में सुबोध होने से अधिक स्वीकार करने योग्य है, ऐसा महात्मा चक्रधर स्वामी का आग्रह भी रहा। ऐसी स्थिति में उनके प्रमुख शिष्य द्वारा हिन्दी भाषा का स्वीकार करना कम आश्चर्य की वस्तु नहीं। परन्तु यह भी एक ऐतिहासिक सत्य है कि आचार्य दामोदर पण्डित ने हेतुपूर्वक हिन्दी को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया।

आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाओं के संबंध में आचार्य विनयमोहन शर्माजी लिखते हैं, "दामोदर पण्डित की हिन्दी में मराठी की छाया है। उसमें खड़ी बोली के साथ व्रजभाषा रूप भी विद्यमान हैं। व्रजभाषा काव्यभाषा के रूप में उत्तर में प्रचलित रही है और वह दक्षिणापथ में भी संचरित हो गई थी।"[१]

हिन्दी की बोलियों में व्रजभाषा सर्वप्रथम काव्यभाषा के रूप में उत्तर में प्रचलित रही है, इस कथन को लेकर कोई मतभेद नहीं हो सकता; परन्तु वह दक्षिणापथ में कब संचरित हो गई? क्या आचार्य दामोदर पण्डित से पूर्व व्रजभाषा में हिंदी काव्यरचनाएँ उपलब्ध हैं? इसका उत्तर संभवतः यही देना होगा कि

---

१. आचार्य विनय मोहन शर्मा "हिन्दी को मराठी संतों की देन" पृष्ठ ८८.

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

आचार्य दामोदर पण्डित ही वह पहले अहिन्दी भाषी हिन्दी रचनाकार हैं, जिनपर उत्तर प्रदेश में प्रचलित व्रजभाषा हिन्दी के संस्कार हुए थे और उनकी व्रजभाषा एवं खड़ी बोली मिश्रित वाणी ही महाराष्ट्र में प्राप्त हिन्दी की पहली काव्य रचना है। आचार्य महोदय ने ही अपने मौलिक विवेचन में इस तथ्य को अंशतः स्वीकार किया है। आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी भाषा की सरलता के संबंध में विवेचन करते हुए आपने कहा है, 'आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाओं में यद्यपि काव्य का कोई चमत्कार नहीं है, तथापि मुसलमानों के संसर्ग से रहित दक्षिण में हिन्दी का रूप किस प्रकार सहज रीति से विकसित हो रहा था, इसकी झलक इनकी भाषा में दीख पड़ती है।" १

आचार्य दामोदर पण्डित द्वारा लिखित चौपदियों की भाषा पर विचार करते हुए डॉ. कोलतेजी लिखते हैं –

"दामोदर पण्डित अपने पूर्वजीवन में नाथपंथीय रहे होंगे। नाथपंथ का अधिकांश साहित्य हिंदी भाषा में रचा गया और इस पंथ का प्रचार भी उस समय हिन्दी भाषी प्रदेश में ही अधिक मात्रा में रहा था। इसीसे दामोदर पण्डित का हिन्दी भाषा से परिचय होना स्वाभाविक लगता है।" २

गुरु श्री नागदेवाचार्य की आज्ञा प्रमाण मानकर आचार्य दामोदर पण्डित ने नाथपंथी जोगी के साथ चर्चा-विमर्श करने का प्रसंग "स्मृतिस्थळ" में मिलता है। वास्तव में यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि श्री नागदेवाचार्य दामोदर पण्डित को ही जोगी से वादविवाद करने के हेतु क्यों आज्ञा देते हैं? इसका उत्तर डॉ. कोलते महोदय ने योग्य ही दिया है,

"चौपदियों में नाथ पंथियों का तथा उनके दर्शन का अनेक स्थलों पर उल्लेख आया है। इससे भी हमारे अनुमान को पुष्टि प्राप्त होती है कि दामोदर पण्डित महानुभाव पंथ में दीक्षित होने से पूर्व नाथ पंथीय दर्शन के अनुगामी रहे होंगे।" ३

नाथ पंथ के दर्शन तथा आचार-विचारों से पूर्ण परिचित आचार्य दामोदर पण्डित श्री नागदेवाचार्य की दृष्टि में नाथमत के खण्डनार्थ सुयोग्य व्यक्ति बन गए। अतः उन्हीं को महानुभाव मतों का मण्डन तथा नाथ योगियों से दार्शनिक

---

१. "तत्रैव", पृष्ठ ८८.

२. "वछाहरण": प्रस्तावना, पृष्ठ २६। २७.

३. "वछाहरण": प्रस्तावना, पृष्ठ २७

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चर्चा करने का कार्यभार सौंप दिया गया। यह सारी चर्चा हिंदी मिश्रित मराठी अथवा मराठी-मिश्रित हिंदी में ही हुई होगी। आचार्य दामोदर पण्डित की उपलब्ध चौपदियाँ ही स्वयं इस तथ्य के लिए प्रमाण हैं।

इन चौपदियों के कुल सात प्रकरणों में से प्रथम प्रकरण का परिश्रम-पूर्वक संपादन प्रथम करनेवाले प्रा. व. दा. कुलकर्णी महोदय ने भी आचार्य दामोदर पण्डित के द्वारा हिंदी भाषा के स्वीकार करने के संबंध में ऐसाही अनुमान लगाया है, "नाथपंथी योगियों के साथ वादविवाद करने के अनेक प्रसंग आचार्य दामोदर पण्डित ने अनुभव किए। नाथपंथीय मतों का खण्डन कर अपने महानुभावीय दर्शन का मण्डन करना उनका कार्य सा हो गया था। नाथपंथीयों को निरुत्तर करने के लिए उनके द्वारा प्रयुक्त हिंदी भाषा एवं उन्हींकी दार्शनिक परिभाषा का प्रयोग करना उन्हें आवश्यक हो गया हो।" [१]

चौपदियों की हिन्दी भाषा की संमिश्रता

स्वयं आचार्य दामोदर पण्डित का अपनी हिन्दी रचना के संबंध में दृष्टिकोण उनकी चौपदियों की समाप्ति मुद्रा के कथन से स्पष्ट है। उसे कथन को देखते हुए यह निश्चित कहा जा सकता है कि, आचार्य महोदय "नाथ-वाणी" का विचार एवं विवेक के साथ खण्डन करना चाहते थे। और इस कार्य के लिए नाथ जोगियों की भाषा के अतिरिक्त दूसरा अन्य उपयुक्त माध्यम कौनसा हो सकता था? यथा :

"नाथवाणी प्रसंसीली आन चौपदी ही गाइली : म्हणौनि तें प्रमाण करून पण्डितबासी ते भाशा प्रधान करूनि चौपदियाँ केलीया : तयाची प्रशंसा भटोबासीं केली : गेला ठेला अर्थ तो चौपदीत केसवदेवाचीए वोवी चौपदीएसि पाहावाः म्हणजे एवं वोवी चौपदीएसि पाहावा : तदानुसार जो शास्त्रविचार तोचि भटोबास पण्डित केसवादिकां प्रमाण पुरुषांचा : सीधांत अवबोध जाणीजे : या वेगळा तो पूर्वपक्षादि प्रकारें वोळखीजे : एवं ते वोवी चौपदी प्रमाण स्मृतिरूपः बोलिजेः तथा चौपदीयाचा आन्वयों ऐसाः" [२]

---

१. "दामोदर पण्डितांच्या चौपद्या, प्रकरण पहिले",
"मराठी स्वाध्याय-संशोधन-पत्रिका", उस्मानिया विद्यापीठ, अंक एक, १९६६, पृष्ठ २९

२. तत्रैव, संहिता विभाग पृ. १

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियों के अन्तर्गत चर्चित "शास्त्रविचार" की भाषा का स्वरूप स्पष्ट करते हुए हमने उपर्युक्त विवेचन में यह प्रमाणित किया हैं कि इन चौपदियों की रचना पूर्णतः हिंदी अथवा मराठी में नहीं हुई। साठ चौपदियों में से पैंतीस मराठी में तथा पचीस हिंदी में रची गई हैं। परन्तु यह विभाजन भी पूर्णतः ठीक नहीं कहा जा सकता। वास्तव में आचार्य दामोदर पण्डित ने हिंदी मिश्रित मराठी में ये रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। जहाँ मराठी का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है, वहाँ हमने उस चौपदी को मराठी रचित माना है

यहाँ रचनाखंड में संकलित की गई चौपदियों में से क्रमांक, १, ९, ११, १२, १८, २२, २६, २७, २८, २९, ३०, ३७, ३८, ३९, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४८, ४९, ५२. ५३, और ५४ को पूर्णतः हिंदी माना जा सकता है। शेष चौपदियों में हिंदी का थोड़ासा प्रभाव-मात्र है। इन्हें मराठीही कहा जा सकता है। हिंदी चौपदियों का लेखन भी कभी मिलीजुली भाषा में किया गया है, कभी पूर्णरूपेण हिंदी में। इस रचना के मूल में कवि का जो खंडनकार का रूप रहा है, वह महत्त्वपूर्ण है। नाथ सांप्रदायिक साधु महंतों से चर्चा अथवा वादविवाद के हेतु हमारे कवि ने तेरहवीं शती के पूर्व हिंदी का माध्यम बनाया था, यह तथ्य विशेष महत्त्वपूर्ण है। आचार्य दामोदर पंडित की यह मराठी-मिश्रित हिंदी भाषा 'सधुक्कडी' भाषा से साम्य रखती है। नाथसिद्धों की प्राचीन बानियाँ ऐसी सधुक्कडी भाषा में ही प्राप्त होती हैं। इस भाषा को आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी ने 'संध्याभाषा' संबोधित किया है।[1] 'गोरखवानी' में हम ऐसी भाषा के दर्शन करते हैं। आचार्य दामोदर पंडित की चौपदियों में प्रयुक्त क्रिया-रूप और 'गोरखबानी' में प्रयुक्त क्रियारूपों की समानता विचारणीय है। यथा,

नवही नाथः सोळाही सिद्धः
देखत देखता काळें खादाः
गुरुमुख बचने थिर नव्हती रे अंधाः
न गाया तुम्हारा धीधता
बुझो हो पुरुखाः बुझो हो जोगीः
मनवा चंचल करींवा भायीः
जिन्हें काटने तुम्हीं इक रोकांतीः
ते आनी आनी भ्रांती जाइः इत्यादि[2]

१. आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : 'हिंदी साहित्य की भूमिका' पृष्ठ ३३–३५
२. रचनाखण्ड : चौपदी क्रमांक ६०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपरोक्त चौपदी में प्रयुक्त बुझो, नव्हती, करीं, इत्यादि क्रिया-रूप 'गोरख-बानी' में भी प्राप्त हैं। 'गोरखबानी' में प्रयुक्त कुछ क्रियारूप दृष्टव्य हैं –

सहज पालाण पवन करी घोडा
अभेंद भेद छेदिले,

ऐसे क्रियारूप प्राचीन मराठी में बहुतायत से मिलते हैं। अपने शोध प्रबंध में हमने एक स्वतंत्र अध्याय में 'गोरखवानी' और संत नामदेव की प्राप्त हिन्दी पदावली की भाषा का तौलनिक अध्ययन प्रस्तुत किया है।[1] नामदेव वाणी तेरहवीं शती में महाराष्ट्र में प्रचलित संध्या भाषा हिन्दी का और आदिकालीन मराठी का एक महत्त्वपूर्ण प्रमाण हमारे संमुख रखती है। डॉ. पीतांबरदत्त बडथ्वाल द्वारा हिन्दी प्रदेशों से संकलित 'गोरखबानी' पर ऐसी महाराष्ट्र में प्रचलित संध्याभाषा का बहुत प्रभाव दिखाई देता है। इसीसे 'गोरखवानी' और नामदेव वाणी में गहरा भाषिक साम्य है। संत नामदेव और आचार्य दामोदर पण्डित एक ही काल के व्यक्ति हैं। उनकी भाषा में, क्या मराठी, क्या हिन्दी स्वाभाविक साम्य प्राप्त है। हो सकता है, इन दोनों महान् विचारकों ने गुरु गोरक्षनाथ की हिन्दी बानियों से परिचय प्राप्त कर लिया था। संत प्रदेश की सीमाएँ नहीं जानते। प्रांत और जातिधर्म उनके लिए अटकाव नहीं उत्पन्न करते। उनकी उन्मुक्तता तो स्वयंसिद्ध है। नाथ पंथीय विचारक भारतभर संचरण करते रहे। उन्होंने स्वभावत: हिन्दी को अपनाया। तेरहवीं शती से पूर्व ये विचारक महाराष्ट्र में पहुँचे। यहाँ के जन-समाज पर अपना प्रभाव जमा कर रहे। आचार्य दामोदर पण्डित की हिन्दी रचनाओं से यही ऐतिहासिक सत्य प्रमाणित होता है। नाथ-सिद्धों ने महाराष्ट्र में अपने दर्शन का प्रचार किया। उन्हें सफलता भी मिली। जब आचार्य चक्रधर स्वामी ने अपनी महानुभाव विचारधारा को समाज के संमुख रखा, तब आवश्यकता निर्माण हुई कि पूर्व प्रचलित विचारों का खंडन किया जाएँ और नूतन महानुभावीय विचारधारा की मंडन किया जाएँ। इसीलिए दामोदर पण्डित ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। उनकी रचनाओं का श्रोतृवर्ग केवल महाराष्ट्रीय नहीं था। उन्हें तो समूचे देश के सामने अपने गुरु का मंतव्य रखना था और इसके लिए भारतवाणी हिन्दी के सिवा उस काल में भी दूसरा मार्ग नहीं था।

---

१. 'महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिन्दी काव्य' जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, पृष्ठ ५४,

 CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

भाषा की संमिश्रता आचार्य दामोदर पण्डित के हिन्दी अथवा मराठी भाषा पर होनेवाले अधिकार की असमर्थता को प्रकट नहीं करती। वास्तव में इन सभी रचनाओं का जो मूलभूत उद्देश्य रहा है वही भाषा की संमिश्रता का स्पष्ट उत्तर दे सकता है।

आचार्य की चौपदियाँ काव्य भाषा में हैं, परंतु उनका उद्देश्य कविता-रचना करना नहीं था। उन्हें तो नाथ पंथीय योगियों से दार्शनिक चर्चा करनी थी। इस चर्चा का माध्यम कभी हिन्दी रहा। कभी मराठी रहा। कभी हिन्दी और मराठी का मिश्रण रहा। नाथ सिद्धों की 'संध्या भाषा भी तो मात्र हिन्दी नहीं थी। वह थी एक मिली-जुली भाषा। महाराष्ट्र में उस भाषा पर भी मराठी के संस्कार अटल थे। इसीलिए हम 'गोरखबानी' का पुनर्विचार आवश्यक समझते हैं। आचार्य की भाषा और 'गोरखबानी' की भाषा की अथवा नामदेव पदावली की भाषा की समानता इतिहास के एक अल्पज्ञात अथवा अलक्षित तथ्य की ओर हमें ले जा सकती है।

मंडन करते समय आचार्य स्वाभाविक रूप में मराठी का आश्रय अधिक ग्रहण करने गए। खंडन करते समय उन्हों ने प्रयत्नपूर्वक हिन्दी का आधार ग्रहण किया है।

जो खंडनकार का रूप रहा है, वह महत्त्वपूर्ण है। नाथ सांप्रदायिक साधु महंतों से चर्चा अथवा वादविवाद के हेतु हमारे कवि ने सात सदियों पूर्व हिन्दी को ही माध्यम बनाया था, यह तथ्य महत्त्वपूर्ण है।

छंद विचार

इसके पूर्व हमसे इस तथ्य को स्पष्ट कर ही दिया है कि, आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदी हिन्दी चतुष्पदी से नितान्त भिन्न रचना है। वास्तव में आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदी एक स्वतंत्र छंदोबद्ध रचना है। इस रचनाशैली का विवेचन हम इस परिच्छेद में करना चाहेंगे।

"चौपाई" हिन्दी में बहुप्रचलित छंद रहा है। भक्तिकाल के कवियों ने दोहा तथा चौपाई छंद को विशेष भक्ति के साथ अपनाया। ये दोनों छंद अत्यंत प्राचीन रहे हैं। पाली, प्राकृत तथा अर्धमागधी में भी इनके प्रमाण प्राप्त हैं। जैन साहित्य और अपभ्रंश साहित्य में भी इन्हीं छंदों का प्राचुर्य है।

हिन्दी में चौपई तथा चौपाई छंद के लक्षण क्रमशः इस प्रकार हैं,

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चौपई

इसके प्रत्येक चरण में १५ मात्राएँ होती हैं और अन्त में एक लघु और उससे पहले गुरु वर्ण रहता है। (ऽ।)[१]

चौपाई

इसके प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं। तुकांत में "ज" गण (।ऽ।) अथवा "त" गण (ऽऽ।) का निषेध है। अन्त में प्रायः दो गुरु वर्ण रखे जाते हैं। चौपाई के चरणान्त में दो गुरु वर्ण प्रायः रखे जाते हैं, इससे धारा ठीक रहती है।[२]

चौपाई के अंतिम चरण में "म" या "स" गण भी अपवाद-स्वरूप ही आते हैं। संस्कृत गणात्मक छंद विद्युन्माला, चम्पकमाला, स्वागता, मालती, अमर-विलसिता–इन चार चरणयुक्त छंदों का ही लय संस्कारों के अनुसार विकास होकर हिन्दी में चौपाई छंद का विकास हुआ होगा ?[३]

हिन्दी साहित्य के इतिहास में महाराष्ट्र के, विदर्भ प्रान्त के योगदान को स्पष्ट करने का प्रयत्न करते हुए श्रीमान् प्रयागदत्त शुक्ल महोदय ने अत्यंत संक्षेप में महानुभाव साम्प्रदायिक कवियों के काव्य पर विचार विवेचन प्रस्तुत किया है। "आचार्य दामोदर पण्डित बड़े ही विद्वान थे। उनका हिंदी भाषा से अच्छा लगाव था" कहते हुए लेखक ने उनकी एक चौपदी का उदाहरण प्रस्तुत किया है।[४] यह उदाहरण भ्रांन्तिमूलक हो गया है।

वास्तव में केवल दो ही पंक्तियों को चार पंक्तियों में विभाजित कर लेखक ने उसे "चौपदी" बताया है, जब कि दामोदर पण्डित की चौपदी नितान्त भिन्न रचनापद्धति है।

---

१. आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र : "काव्यांग–कौमुदी" (तृतीय कला) नंदकिशोर एँड ब्रदर्स, वाराणसी, षष्ठावृत्ति १९६६ पृष्ठ २४६.
२. 'काव्यांग कौमुदी', पृष्ठ, २४७
३. डॉ. पुत्तुलाल शुक्ल "आधुनिक हिन्दी काव्य में छंद योजना" (मराठी स्वाध्याय संशोधन पत्रिका" अंक एक, १९६६, प्रा. व. दा. कुलकर्णी के लेख से उद्धृत")
४. प्रयागदत्त शुक्ल, "हिन्दी साहित्य को विदर्भ की देन" पूर्वार्ध, विदर्भ साहित्य सम्मेलन. नागपूर, १९६१, पृष्ठ ३२.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हिन्दी चौपई अथवा चौपाई छंद के लक्षण आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियों में अप्राप्य है। आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदी न तो चौपाई है और न चतुष्पदी रचना ही है। यह एक ऐसी गेय छंदोबद्ध रचना है जिसमें ध्रुपद के अलावा चार पदों का भी अन्तर्भाव है। मात्र प्रत्येक अन्तर्भूत पद की चरण संख्या समान न होने से चौपदी कहीं संक्षिप्त है तो कहीं लंबी रचना हो गई है। फिर भी ध्रुपद तथा चार पदों के अन्तर्भाव का सूत्र इन सभी चौपदियों में दृष्टिगत होने से कहना पड़ता है कि यह एक चौपदई से नितान्त भिन्न छंद-प्रकार है।

" मृगनाल द्वारें सक्रत पंथे गर्म भिडशोध
कर प्रवेशीला हिरा।
पुढां दोनि पंथ जाले, एक पंथ ठेले,
एक ऊंचे पंथे विचरो त्या नगरा ॥
स्फटिकमध्ये हिरा वेध कर गया उजयडि
लोपली भिंगकला।
नागार्जुनप्रसादें झुलो ऐसे म्हणोनि परम
बळखिलो प्रेमकळा ॥ "[१]

इस मराठी-हिन्दी मिश्रित चौपदी को सम्मुख रखकर डॉ. ना. ग. जोशी ने आचार्य दामोदर पण्डित की छंदपद्धति को लेकर कहा है,

" इनकी चौपदी रचना प्रदीर्घ चरणों की है। प्राचीन महानुभावीय साहित्य में प्राप्त धवलगीतों की " कृष्णकुमरी " रचनापद्धति से इसका साम्य दिखाई देता है। उच्चारणपद्धति लघुप्रयास लगती है। उपरिलिखित चौपदी " कल्याण " राग में गायी जाती है।[२]

वास्तव में धवलगीतों की आद्य मराठी कवयित्री होने का सम्मान महानुभावीय कवयित्री महदंबा को दिया गया है। और धवलगीतों की परम्परा आचार्य दामोदर पण्डित से पूर्व नहीं जाती। आचार्य दामोदर पण्डित की सभी चौपदियाँ रागबद्ध हैं और उनके गायन की परम्परा भी अटूट रही है।

---

१. पाठभेद के लिए : रचनाखंड, चौपदी क्रमांक ५७
२. डॉ. ना. ग. जोशी, " मराठी छंदोरचनेचा विकास " : मौज प्रकाशन, मुंबई, प्रथमावृत्ति १९६४, पृष्ठ ३६-३७.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

अपने मौलिक ग्रंथ-लेखन द्वारा मराठी छंदोरचना का विकासक्रम स्पष्ट करनेवाले विद्वान् डॉ. ना. ग. जोशी श्लोक का महत्त्व विशेष मानते हैं।[१] आप के मतानुसार संस्कृत "श्लोक" रचना को सम्मुख रखते हुए उसका एक पाद् अथवा चरण अर्थात् चौथा हिस्सा पद्य की परिभाषा के रूप में स्वीकृत होता गया। मराठी तथा अपभ्रंश में भी "पाद" या "चरण" से चौथा हिस्सा ही अभिप्रेत है। हेमचंद्र के "छंदानुशासन" में इसके लिए प्रमाण प्राप्त होता है।[२]

आचार्य दामोदर पण्डित विरचित चौपदियाँ वाच्यार्थ से चार पदोंवाली रचनाएँ हैं। प्राचीन चरणात्मक रचना से उसका नाता रहा है। प्राचीन हिन्दी तथा मराठी भाषा के छंदों का अध्ययन करते हुए आचार्य दामोदर पण्डित की "चौपदी" रचना का विचार आवश्यक हो जाता है।

बाह्य रचना-तंत्र का विचार करते हुए आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदी गोरक्षनाथ के पदों से साम्य रखती है। "गोरखबानी" के अनेक पद इस दृष्टि से विचारणीय हैं। इन पदों में चार-चार चरणों को दो से लेकर सात तक कड़ियाँ एक-एक पद में अन्तर्भूत हैं। ये पद रागबद्ध होने से गेय हैं।

आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियाँ भी रागबद्ध हैं। साम्प्रदायिक व्यक्ति इन चौपदियों का गायन करते रहते हैं। रचना तथा रागबद्धता की दृष्टि से गुरु गोरक्षनाथ के पदों से इनकी तुलना अवश्य की जा सकती है। यथा,

"कैसे बोलीं पंडिता देव कौंठी ठांई।
निज तत निहारतां अम्हें तुम्हें नाहीं ॥ टेक ॥
पषांणची देवली पषांणचा देव।
पषांण पूजिला फीटीला सनेह ॥ १ ॥
सरजीव तेडिला निरजीव पूजिला।
पापची करणीं कैसें दूतर तिरीला ॥ २ ॥
तीरति तीरति सनांन करीला।
बाहर धोये कैसें भीतरि भेदीला ॥ ३ ॥
आदिनाथ नाती मछींद्रीनाथ पूता।
निज तत निहारै गौरव अवधूता ॥ ४ ॥ [३]

---

१. डॉ. ना. ग. जोशी, : "मराठी छंदोरचनेचा विकास" पार्श्वभूमि, पृ.५-१६.
२. "तत्रैव"
३. डॉ. पीतांबर दत्त बडथ्वाल : द्वि. सं. पृ. १३१–१३२.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इस पद से रचना खण्ड में दी गई चौपदियों का साम्य सहज लक्षणीय है।

गुरु गोरक्षनाथ के विद्वन्मान्य पदों का आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियों से रचनासाम्य प्रतीत होना स्वाभाविक ही है। इसके पूर्व महाराष्ट्र में गोरक्ष गीतों की व्यापक उपलब्धि का विवेचन करते हुए हमने यह स्पष्ट कर दिया है कि महाराष्ट्र में "चौपदी" संज्ञा चर्यापद के अर्थ में ही प्राचीन काल से व्यवहृत है। गोरक्षनाथ द्वारा प्रयुक्त "रामग्री", "बेलाउलि" आदि रागों का भी आचार्य दामोदर पण्डित ने अनुकरण किया है।[१]

"लीळाचरित्र" में उल्लिखित चौपदियाँ तथा महात्मा चक्रधर स्वामी और उनके अनुयायियों द्वारा गायी गईं चौपदियाँ वस्तुतः चर्यापद ही हैं। आचार्य दामोदर पण्डित की इन रचानाओं का उद्देश्य ही नाथपंथीय दर्शन का खण्डन करना था।

नाथसिद्धों की हिंदी भाषा का अध्ययन कर आचार्य दामोदर पण्डित ने उन्हें उनकी ही भाषा में अपने महानुभावीय दर्शन का परिचय करा दिया। नाथसिद्धों का दर्शन अधिकतर चर्यापदों में अभिव्यक्त होता था। आचार्य दामोदर पण्डित ने महानुभाव पंथ की मान्यताओं का मण्डन तथा सिद्धों के आचारविचारों का खण्डन उन्हीं की बहुप्रचारित तथा जनप्रिय शैली में अर्थात् चर्यापद शैली में करने का प्रयास किया।

आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियों के छंदों का विचार करते हुए प्रा. व. दा. कुलकर्णी ने यह अनुमान लगाया है कि, पण्डित की चौपदी रचना-पद्धति महात्मा चक्रधर स्वामी की चौपदी रचना पद्धति से प्रभावित रही है।[२] आगे चलकर आप यह भी कहते हैं कि "लीळाचरित्र" में प्राप्त और महात्मा चक्रधर स्वामी द्वारा गायी गई चौपदी से उन्हें ऐसी रचनाएँ करने के लिए प्रेरणा प्राप्त हुई होगी।[३]

वास्तव में महात्मा चक्रधर स्वामी ने स्वयं चौपदी की रचना नहीं की है। "लीळाचरित्र" में तो उनके द्वारा चौपदी के गाये जाने मात्र का उल्लेख मिलता है।[४]

---

१. 'महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य' पृष्ठ ७७–११८
२. "मराठी स्वाध्याय संशोधन पत्रिका" उस्मानिया विद्यापीठ, हैदराबाद, मार्च १९६६, पृष्ठ ३१.
३. "तत्रैव", पृष्ठ ३१.
४. "लीळाचरित्र": उत्तरार्ध, पृष्ठ ३२१.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आचार्य दामोदर पण्डित विरचित चौपदी चर्यापद ही होने से तत्कालीन संगीतशास्त्रकारों के दिए हुए चर्याप्रबंध से संबंधित लक्षणों को देखना समीचीन होगा। आचार्य शाङ्गर्देव ने अपने "संगीत रत्नाकर" ग्रन्थ में चर्याप्रबंध के संबंध में कहा है –

पद्धडीप्रभृतिच्छन्दा: पादान्तप्रासशोभिता ।।
अध्यात्मगोचरा चर्या स्याद् द्वितीयादितालत: ।।
सा द्विधा छन्दस: पूर्त्या पूर्णापूर्णा त्वपुर्तित: ।।
समध्रुवा व विषमध्रुवेत्येषा पुनर्द्विधा ।
आवृत्या सर्वपादानां गीयते सा ध्रुवस्य वा ।।
इति चर्याप्रबन्ध: ।[1]

इसी संबंध में सिंहभूपाल अपनी "संगीत सुधाकर" नामक टीका में कहते हैं,

"चर्या लक्षयति – पद्धडीति । पद्धडीराहडीमुख्यानि
छन्दांसि यस्याम्: पादानामन्तो नुत्रासयुक्त:;
अध्यात्मवाचकै: पदैरूपनिब्द्धा: सा चर्या ।
द्वितीयादिताले: सा कर्तव्या । तृतीयाबहुवचनाये
तसिलप्रत्यय: । सा द्विप्रकारा – छन्द:पूर्ती पूर्णा:
अमूतविपूर्णा । पुनरपि द्विधा – सर्वेषां पादानामावृती
समध्रुवा: ध्रुवस्यैवावृत्ती विषमध्रुवेति ।।[2]

शाङ्गर्धर के कथनपर टीका लिखते हुए कलीनाथ ने भी अपनी "कलानिधि" टीका में कहा है,

"अर्थ चर्या लक्षयति-पद्धडीत्यादिना । पद्धडीप्रभृतिच्छन्दा

---

१. "संगीत रत्नाकर" : खण्ड २ पृष्ठ २९२–९४.
२. पं. एस्. सुब्रह्मण्य शास्त्री, : संपादक "संगीत रत्नाकर" दि अड्यार लायब्ररी ॲण्ड रिसर्च सेंटर, मद्रास, पृष्ठ ३२८.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इति। पद्धतीप्रभृतीनि छन्दांसि यस्याः सा;
पद्धडीप्रभृतिषु छन्द.स्वेकेन बद्धेत्यर्थः।
पद्धडीछन्दोलक्षणमनन्तरमेव वक्ष्यते। अध्यात्मगोचरेति।
अध्यात्मं विषयीकृत्य प्रवृतेत्यर्थः। द्वितीयादितालत
इति। "दौ लो द्वितीयिकः" इति द्वितीयतालस्य लक्षणं
वक्ष्यते। आदिशब्देन तत्सममात्रो न्यो पि तालो
गृह्‌यते। समध्रुवेति। समो ध्रुवो यस्या इति बहुव्रीहि:।
समशब्दस्य सापेक्षत्वादत्र प्रत्यासत्योद्ग्राह एवापेक्ष्यते:
तेन ध्रुवस्योद्ग्राहसमत्वमवगम्यते। एवं विषमध्रुवेत्यत्रापि
ध्रुवस्योद्ग्राहापेक्षया न्यूनत्वेन वाधिकत्येन वा विषमत्वं
द्रष्टव्यम्। आभोगः पृथवपदैः कर्तव्यः। तेनायं त्रिधातुः।
छन्दस्तालनियमान्वियुक्तः। पदतालब्द्धत्वात् द्व्यङ्ग:
तारावलीजातिमान्।।[1]

चर्चाप्रबंधों के इन लक्षणों से यही एक निष्कर्ष निकलता है कि आचार्य दामोदर पंडित की हिंदी-मराठी संमिश्र चौपदी रचनाएँ चर्चापदों के निकट का छंद प्रकार है। चतुष्पदी-चउप्पदी-चौपदी यह व्युत्पति उचित है, इसलिए सर्वमान्य हो सकती है। दामोदर पंडित की प्राप्त सभी रचनाएँ चार कडियों की हैं। इससे भी उपरोक्त व्युत्पत्ति की उचितता को पुष्टि मिलती है।

दार्शनिक विवेचन

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आचार्य दामोदर पण्डित महानुभावीय पंथ के एक महान् दार्शनिक रचनाकार थे। तत्कालीन महाराष्ट्र में प्रचारित नाथ मत का खण्डन करनेवाले महानुभावीय पण्डितों में आप को मूर्धन्य स्थान देना होगा। उनकी चौपदियों का आद्य महानुभावीय तथा आद्य महाराष्ट्रीय हिन्दी की रचनाओं के रूप में ही नहीं वरन् नाथ पंथीय दर्शन के तत्कालीन स्वरूप को भली भाँति समझने की दृष्टि से भी अनन्य साधारण महत्त्व है।

---

१. 'संगीत रत्नाकर" खण्ड २, पृष्ठ ३२७–२८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

दामोदर पण्डित ने अपने मराठी कथा-काव्य "वछाहरण" में यथासंभव महानुभावीय दर्शन का परिचय प्रस्तुत किया है। उनकी दृढ धारणा रही है,

सांडा सांडा अहंकारा।
अनुसेंरा श्री चक्रधरा॥

अर्थात् अहंकार को निश्चयपूर्वक त्याग कर श्री चक्रधर स्वामी प्रणीत दर्शन को स्वीकार करें।

"वछाहरण" एक कथाकाव्य होने से उसमें दार्शनिक स्पष्टीकरण के लिए पण्डित कवि को अपेक्षाकृत कम अवसर प्राप्त हुआ है। चौपदियों की रचना तो महानुभावीय दर्शन के मण्डनार्थ ही हुई। इसीसे चौपदियों में पण्डित कवि की दार्शनिकता अधिक दृष्टव्य है।

गुरु श्री नागदेवाचार्य से चर्चा-विमर्श करने के लिए कुछ नाथ साधुओं के आनेपर उन्होंने अपने शिष्य की योग्यता का संमान करते हुए उसे नाथ पंथ के खण्डन के लिए आदेश दिया। गुरु की आज्ञा को ग्रहण कर आचार्य दामोदर पण्डित ने नाथ-सिद्धों को "आक्षेपित" किया, अर्थात् उनको अनेक प्रश्नोपप्रश्नों से परास्त कर दिया और फिर "नवनाथ कहे सो नाथपंथी" यह प्रसिद्ध चौपदी अर्थात् चर्यापद का गायन किया।[1] इस सांप्रदायिक धारणा के लिए "स्मृतिस्थळ" तथा 'अन्वयस्थळ" में पर्याप्त प्रमाण प्राप्त होते हैं, जिनकी चर्चा पूर्व-परिच्छेदों में हमने प्रस्तुत की हैं।

आचार्य दामोदर पण्डित नाथपंथीय विचारप्रणाली का संपूर्ण ज्ञान रखते हैं। नाथसिद्धों के आचारों का उन्होंने विशिष्ट दृष्टि से अवलोकन भी किया है। महात्मा चक्रधर स्वामी प्रणीत द्वैत साधना तथा उदार आचार से वह अत्यंत प्रभावित हुए हैं। महानुभावीय दर्शन ही साधक को अंतिम उद्दिष्ट तक पहुँचा सकता है, ऐसी उनकी दृढ़ धारणा भी रही। परंतु यह विशेष प्रशंसनीय ऐतिहासिक सत्य है कि आचार्य दामोदर पण्डित नाथ मत के खण्डनार्थ चुनौती लेकर लिखते समय भी कहीं अनुदार स्वरों में नहीं लिखते। आचार्य दामोदर पण्डित के संपूर्ण उपलब्ध काव्य में कहीं भी नाथ-मत के संबंध में अथवा नाथ मतानुयायी योगियों के संबंध में अवमानमूलक उद्गार नहीं है।

---

१. रचना खण्ड : चौपदी क्रमांक १८

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चौपदियों में अभिव्यक्त महानुभावीय दर्शन का सप्रमाण विवेचन मराठी के अनुसंधाताओं ने विद्वत्तापूर्ण रीति से प्रस्तुत किया है। विस्तार भय से हम केवल उसका दिशानिर्देश मात्र कर रहे हैं।[1] शोध विषय की सीमा में हमने आचार्य दामोदर पण्डित की नाथ संप्रदायविषयक दृष्टि मात्र को स्पष्ट किया है।

महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से अब यह भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य दामोदर पण्डित का हिंदी साहित्य के आविर्भावकाल में अपना विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। नाथसंप्रदाय में दीक्षित ख्यातनाम वारकरी संत नामदेव तथा आचार्य दामोदर पण्डित के काल में विशेष अंतर न होने पर भी उनकी हिंदी रचनाओं के के काल में अंतर स्पष्ट है। शक १२५४ के पूर्व संत नामदेव पंजाब में नहीं पहुँचे और उनकी प्राप्त हिंदी रचनाएं शक १२५४ के अनंतर रची हुयी मिलती हैं। आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी वाणी निश्चय ही शक १२३४ पूर्व की रची हुई है। यह हिंदी वाणी अपने अविकृत रूप में सुरक्षित रही है। और इस वाणी का सांप्रदायिक तथा भाषिक महत्त्व अनन्य साधारण है। संत नामदेव तथा आचार्य दामोदर पण्डित के जीवन काल एवम् कृतित्व का ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करते हुए यह सप्रमाण निश्चित हो जाता है कि आचार्य दामोदर पण्डित ही वह पहले महाराष्ट्रीय हिंदी कवि हैं, जिन्होंने संत नामदेव से पूर्व हिंदी में रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। अतः महाराष्ट्रीय हिंदी कवि के रूप में उनका आद्यस्थान मानने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

नाथसम्प्रदाय के आविर्भाव काल के संबंध में भी कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य आचार्य दामोदर पण्डित की हिंदी रचनाओं का अवलोकन करने पर हाथ आते हैं। आचार्य दामोदर पण्डित संभवतः पहले ऐसे हिन्दी कवि हैं जिन्होंने नाथ-मत के खण्डनार्थ हिन्दी में रचनाएँ प्रस्तुत कीं। उनकी चौपदी रचना वास्तव में सरल हिन्दी चर्यापद हैं जो बारहवीं शती के उत्तरार्ध में रचित होकर सांकेतिक लिपियों में लिपिबद्ध रहने से अविकृत रूप में हमें प्राप्त होते हैं।

---

१. प्रा. व. दा. कुलकर्णी, दामोदर पण्डितांच्या चौपद्यांतील तत्त्वज्ञानाची पूर्व पीठिका " "महानुभाव ", मासिक पत्रिका, अमरावती, मे – जून १९६६.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

तेरहवीं शती में महाराष्ट्र में एक श्रेष्ठ आचार्य के द्वारा नाथ-मत प्रणाली का खण्डन किया जाना इस तथ्य का भी सूचक है कि उस काल के पूर्व महाराष्ट्र में नाथमत का पर्याप्त प्रभाव था।

नाथमत का प्रभावी खण्डन करनेवाले आचार्य दामोदर पण्डित महानुभाव संप्रदाय में दीक्षित होने से पूर्व नाथ सम्प्रदाय के व्यक्ति रहे होंगे। उनकी चौपदियों में नाथ पंथ संबंधी अवलोकन अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ तो प्राप्त है ही; परन्तु नाथ साम्प्रदायिक पारिभाषिक शब्दावली चर्यापदशैली तथा रागबद्धता के साथ साथ यहाँ पर बारहवीं शताब्दी के महाराष्ट्र के सांस्कृतिक वातावरण की झलक भी स्पष्ट है, जो नाथमत के प्रभाव से परिव्याप्त है। नाथ पंथ के संपूर्ण परिचय के साथ उसके खण्डनार्थ प्रतिज्ञाबद्ध आचार्य दामोदर पण्डित कहीं भी उसके संबंध में अनुदारता से नहीं लिखते, यह एक लक्षणीय तथ्य है।

आचार्य दामोदर पण्डित की उपलब्ध साठ चौपदियों का एक संकलन रचना खण्ड में दिया गया है। इस संकलन के सम्पन्न पद हिंदी में लिखित नहीं हैं। कुल पचीस पदही ऐसे हैं जिन्हे हिंदी पद कहा जा सकता है। अन्य पद या तो मराठी कहे जायेंगे या उन्हें मराठी से सर्वथा प्रभावित हिंदी पद कहना अधिक उचित होगा। इन समस्त साठ चौपदियों का एकत्रित अध्ययन उपादेय है। इनमें नाथमत-खण्डन का एक सत्र है। इसीसे ये चौपदियों एक दूसरे से संबंध भी हैं।

आचार्य दामोदर पण्डित का रचना काल अर्थात् तेरहवी शती हिंदी अथवा मराठी जैसी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास का आरंभ-काल है। इस काल में भाषाओं की पारस्परिक विभिन्नता बहुत स्पष्ट नहीं हो पाई थी। सच तो यह है कि हिंदी भाषी प्रदेश अथवा मराठी भाषी प्रदेश ऐसी सीमारेखाएँ भी अस्पष्ट ही थीं। प्रांत और प्रांतिक अस्मिता तो दूर की बात है। हमारे कवि ऐसे आधुनिक भारतीय भाषाओं के आविर्भाव काल के सम्मानित कवि हैं। उनकी रचनाओं का महत्त्व अनन्य साधारण है। एक तो वह अपने काल की प्राचीनतम उपलब्ध हिंदी रचना है। वह हिंदीतर भाषा-भाषी प्रांत में रचित और रक्षित रचना है। उसका महत्त्व हमारे सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से भी है और भाषा-विकास-क्रम के संदर्भ में भी हैं।

हमने यहाँ रचना खण्ड में जो चौपदियाँ दी हैं वे आज पहली बार अपने समग्र रूप में हिंदी के अनुसंधायकों के सम्मुख आ रही है। यहाँ स्वीकृत हस्तलेख वैसे बहुत अधिक प्राचीन काल का तो नहीं है। परंतु प्राप्त हस्तलेख अपने आपमें संपूर्ण है यही उसकी मुख्य विशेषता है। अब इसके साथ अन्यत्र उपलब्ध हस्तलेखों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

की तुलना की जा-सकती है, और पाठनिर्धारण का कार्य भी किया जा सकता है। उसके पहले आचार्य दामोदर पण्डित का जीवन-चरित्र, उनका साहित्य और उनका काल-निर्धारण होना आवश्यक था। प्रस्तुत अध्ययन में यही कार्य करने का प्रामाणिक प्रयास किया गया है।

नवीं शती से पंद्रहवीं शती तक का हिंदी साहित्य का आदिकालीन इतिहास पर्याप्त स्पष्ट नहीं है। निर्गुण मत के प्रमुख संत कवि कबीरदास के पूर्व संत नामदेव का एक अपवाद छोड़कर ऐसा कवि हमारे सम्मुख नहीं जिसका जीवन, चरित्र, कार्य तथा काव्य समग्रता से ज्ञात हो सके। अब आदिकालीन हिंदी कवि के रूप में आचार्य दामोदर पण्डित को गरिमा के साथ प्रतिष्ठित किया जा सकता है।

***

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आद्य महाराष्ट्रीय
हिंदी कवि
आचार्य दामोदर पण्डित
विरचित
चौपदियाँ अर्थात् चर्यापद

रचना खण्ड

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संकलित चौपदियों का हस्तलेख महानुभावाश्रम, पैठण रोड, औरंगाबाद में विद्यमान है। हमारे अनुसंधायक मित्र डॉ. म. प. पेठे और श्रीमान् वि. ग. पोंक्षे ने इस हस्तलेख के आधार पर इन चौपदियों को मराठी संशोधन पत्रिका के अंकों में प्रकाशित भी किया है।[1]

'सकळी' सांकेतिक लिपि में लिखित इन चौपदियों का मूल पाठ सिद्ध करने का अच्छा प्रयास डॉ. म. प. पेठे तथा श्रीमान् वि. ग. पोंक्षेजी ने किया है। अतः उनके द्वारा प्रकाशित पाठही हमने स्वीकार किया है। टिप्पणियों में यत्रतत्र कुछ शब्दार्थ सूचित किए हैं।

---

१. 'मराठी संशोधन पत्रिका'
वर्ष २१, अंक १–४, इ. स १९७४
मराठी संशोधन मण्डळ,
१७२, मुंबई मराठी ग्रंथसंग्रहालय मार्ग, दादर, मुंबई १४.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

आचार्य श्री दामोदरपंडितविरचित चौपदियाँ

॥ श्रीपरेशाय नम: ॥ श्रीदत्तात्रेयाय नम: ॥

॥ १ ॥

॥ राग धानाश्री ॥

[पढो हो पंडित] गुणो हो शास्त्र : आलोडो सकल पुराणा:
उसमध्यें नही हो बाबा: करमु कुवडा धाधा : उगवंति गुरुमुखखुणा ॥१॥धृ॥
सुनो हो बाबा सुनो हो पंडित : सुनो हो वैरागी भायी :
हमारी शाखी बिरला सुने : बुझंति ते बिरला कोयी ॥ छ् ॥
अनंत पुरुख हो अनंत भाखा : पुकारंति आन आन विचार :
सबही मिलकर रहनि न जानंति : पंथ तो अपरांपरु ॥ २ ॥
सिद्धांतके सिद्ध न सिद्धति हो बाबा : सारे अवधतके हमें राजे :
सबही व्यापिनि जगकी स्वामिनि : उसपर जजिर बा [जे] ॥३॥
राजाधिराजकी हमने नही [हो संका] : अमरका [सार सुद्धा पा] या :
नागार्जुनका पुता शिरिमुखबचनी : निरमुळका मुळ खाया ॥ ४ ॥

---

१ :

गुणो–गुनो–समझो ।
आलोडो–आलोडन करो–गहराई में जाओ ।
उसमध्ये–उसके बीच ।
कुवडा–पंगु–रसहीन ।
उगवंति उदय होता है ।
गुरुमुखखुणा–गुरुमुख से संप्राप्त होनेवाले चिह्न ।
शाखी–साखी–साक्ष्य ।
बुझनि–समझते हैं ।
शिरिमुखबचनी–श्रीमुखवचनी ।
भाखा–भाषा ।
आन आन बिचार–अन्यान्य विचार ।
अपरांपरू–अपरंपार ।
हमें–हम स्वयम् ।
अवधत–अवधूत ।
पुता–पुत्र–शिष्य ।
निरमुळ–निर्मूल ।
मुळ–मूल ।
पुरुख–पुरुष ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ २ ॥

॥ राग नाथांची रामग्री ॥

कवन हो करिता कवण हो करविता : कवणा भ्रम उपनला :
कवण उपजौनि विलयासि गेला : कवण कवण उपासिला ॥ १ ॥ धृ ॥
बोलति षट्प्रमाणे आत्मप्रतीती : एक असे अनेक जालें ऐसें भावंति :
जड चेतन भिन्न ऐसीं नही निरुती : अनिवर्चनीय माया भणंति ॥ छ् ॥
प्रत्यक्ष भिन्न देखंति त्य उपदेशी एक बुझंति :
दृष्टिबंध जेवि विभूती शिवा भ्रांती :
एकां पिसें फीटलें मुसळ तेणें वेढिले : तैसें उपदेशें एकां शिक्षा जालें ॥२॥
पहिले चिती भ्रमलें दुसरें लिंगी भुललें : तिसरें सामान्य बोधें स्थूळीं उठिलें।
चौथें खंड बोधियां अपरींपर बुझलें : तेनें मायावसें चहुं कृती भविनलें ॥३॥
ऐसे प्रतिसृष्टी पराप्रवृत्ती भ्रमीं पडिले :
तयांलागौनि अवतारु लीळा परकर्म क्षिती :
इष्टनिष्ट जानौनि चक्रस्वामीचे चरण धरिती:
नागार्जुना सूत पंडित भणे तयां नाहीं च्यूती ॥ ४ ॥

---

२ :

कवन–कवण–कौना।	**करिता**–करनेवाला।
करविता-करतार–ईश्वर।	**भावंति**–जानते हैं।
उपनला–उत्पन्न हुआ।	**भणंति**–भणति–कहते हैं।
पिसें–पागलपन।	**अपरींपर**–अपरंपार।
स्थूळीं–स्थूल के प्रति।	**मायावसें**–मायावश।
भ्रमीं–भ्रम में।	**पडिले**–डाल दिया।
तयांलागौनि–उसके कारण।	**जानौनि**–जाणौनि-जानकर
चरण धरिती–चरणों में नत मस्तक होते हैं।	**भणे**–म्हणे-कहता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३ ॥

॥ रागु रामग्री ॥

कवण हो बंधा कवण हो मुगता : उत्पन्न कवणु कवण लया जात :
परनाथप्रसादें बुझो परपंथ : विचारें महाशांवधूत ॥ १ ॥ धृ ॥
पढंति बोलंति नाथको बानी : नेनिजे वेद आगम पुराणी :
शुकाशारिका सवादु तैसा बुझें ना कव्हणी : अनुभवें बिरला निरवाणी ॥छ॥
पांचहीं इंद्रिय विषयां न र्‍हायी : चित्त चंचळ निश्चळ होयी :
आशापाश तुट गए स्वभावीं रायी : सो असे हो मुगुत जोयी ॥ २ ॥
न करे कर्म न धरे धर्म : फिट गया मायाकेरा भ्रम :
असे ते भोगितां निमाने जन्म : सो जोयी आतमाराम ॥ ३ ॥
प्रक्रिती पर आप दीठौ जेनें : मूळ कारण तोही जाने :
श्रीचक्रसामीप्रसादें नागार्जुन भणे : सो जोयी संसार जीने ॥ ४ ॥

---

३ :

बँधा-बद्ध-अतिरक्त
लया जात–नष्ट होता है।
मुगता–मुक्त।
बुझो–जानो–पहचानो।
नेनिजे–नेणिजे–जाने ।
जोयी–जोगी।
प्रक्रिती–प्रकृति ।
पढंति बोलंति–पढ़ते हैं, बोलते हैं।
कव्हणी–किसीको।
र्‍हायी–रहते हैं।
चंचळ-चंचल।
तो ही–वह ही-वही।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ ४ ॥

कवण हो बंधक : कवण हो मोचक : ऐसा विचार नेनेसि :
बुझसी ते तुं नव्हेसि ; कवणें कल्पविलासि ते तुं नेनसि ॥ १ ॥ धृ ॥
कवणाचें कवणा पडिलें धरणें : कवणे कवण सोडविलें माझारि :
ऐसा विचारु नाहीं प्रमाणी : चिदादि गेलेयां माझारिल ॥ छ् ॥
आदिनाथ स्वयंप्रकाशु नेनेसि : आनातें आन म्हणसील :
जाहां जाहां हटमार्गी मुक्त म्हणसी : अनादि बंधने ने [न] सि ॥ २ ॥
अंतरबाहियें ज्ञानी लागले मुनी : जे सांघीतलें प्रमाणस्थिती :
ते अच्युतगति पावेति : मूर्तिनिषेध निषेधें निरहिंसा होति ॥ ३ ॥
अधिक्रितां जैं जाणंवी सर्वज्ञ : तैंचि जानिजे निर्धारू :
सर्वभावीं जेंही तरिला चक्रेश्वरु : नागार्जुन कहंति ते तरले भवसागरु ॥ ४ ॥

---

४ :

बंधक–बंधन में डालनेवाला।
मोचक–मुक्त करनेवाला।
नेनसि–नेणसि–जानते हो।
माझारि–में।
हटमार्गी–हठयोगी।
गेलेयां माझारिल–जो गए हैं, उनमें से।
अंतरबाहियें–आंतरबाह्य।
सांघीतलें–सांगीतले–कथन किया।
जानिजे–जाणिजे–जान लो। जानो।
निर्धारू–निर्धार–निश्चय।
जाणंवी–पहचान करा देना।
कहंति–कहते हैं।
तरले–तर गए। उद्धार हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५ ॥

आरे कवणें उपजविला कवणे लया नेला : कवणे प्रकटिला हंसु :
ऐसें बुझिलो सहजें सतगुरु उपदेशे : जरि होये तिहींचा प्रकाशु ॥ १ ॥ धृ ॥
आरे पाप ना पुण्य : आप हुवे शून्य :
तो क्रमु करो : मनावाचे अगोचर धन्य ॥ छ् ॥
अरे कवण तो मुगुत कवण तो बंधी पतितु : कवण चाळीत तयातें :
हें बोलतां आंबलीं वेदातें : तें अनुभवें जानितिलें निरुतें ॥ २ ॥
आरे अकरितां करविला आपणपें भुलविला : चहंकडे भवंडिला जेनें :
तों जयाचा पायिक तयाते जो जाने : तेनें निवारंति जन्ममरणे ॥ ३ ॥
आरे मोह ना माया संचिले तें गेलें वायां : मनपवना लो जया आनंदे :
चक्रेश्वरापसायें नागर्जुण भणे : असो हमें सदा आनंदें ॥ ४ ॥

---

५ :

कवणे–किसने ।
उपजविला–उत्पन्न किया । जन्म दिया ।
लया नेला–नष्ट किया ।
अगोचर इंद्रियातीत ।
आपणपें–स्वयम् ही ।
मुगुत–मुक्त
आंबली–थक गये ।
पायिक–अनुगामी ।
निरुतें–स्पष्ट ।
जानितलें–जाणिलें-जान लिया ।
चहंकडे–चहुंकडे-चारों ओर ।
निवारंति–निवारण करते हैं ।
वायां–व्यर्थ ।
चक्रेश्वरापसायें–चक्रधर महात्मा के प्रसाद से । कृपावश

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ ६ ॥

आप ना तेज वायु ना आकाश : नाही रे पाचही भूता :
हे सचराचर जैं रचलेंचि नाही : तै जीव कवने ठाईं होता ॥ १ ॥ धृ ॥
बुझो रे बुझ। बुझतां बुझ न जायी :
आप नेनेसी परशुद्धि न जानेसि : तुं हृदां चिंतिसी कायीं ॥ छ् ॥
नाद ना बिंद कळा ना ज्योति : नाहीं रे आपें आप।
मीं माझें जैं रचलेंचि नाहीं : तै कवन माये कवन बापु ॥ २ ॥
चंख ना पंख : श्रवण ना डोळे : नाहीं रे दशही द्वारे :
सप्तपाताळे जैं रचलेंचि नाहीं : तैं तुं आलासि कवणें आधारें ॥ ३ ॥
कवणें रचविली कवणे रचिली : कवणें केला विस्तारु :
चक्रेशप्रसादें नागार्जुन कहे : सिद्धां साधकां हाचि विचारु ॥ ४ ॥

---

६ :

कवने–किस–कौनसे ।
ठाइं–स्थान । (स्थानपर)
बुझो–समझो ।
नेनेसी–नेणेसी–न जानना
बिंद–बिंदु–उगमस्थान
हृदां–हृदय में ।
कायीं–काही–कुछ ।
कळा–कला–रूप ।
माझें–मेरा ।
माये–माय–माता ।
डोळे–आँखें ।
विस्तारु–विस्तार ।
बिचारु–विचार–सिद्धान्त

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ७ ॥

नाद नाहीं बिंदु नाहीं कळा नाहीं ज्योति नाहीं :
नाहीं लो आनंद आवेश अवस्था :
अकळित आकळिता ये दोन्हीं पारुखलीं : तैं सृष्टि कवणु रचविता ॥ १॥ धृ ॥
आप नाहीं तेज नाहीं वायु नाहीं आकाश नाहीं : जैं नाहीं पृथिवी पंच बद्धा :
चंद्र सूर्या ब्रह्मादीक नाहीं : तैं अकल्पित कैसें पडिलें फांदां ॥ छ् ॥
तेतीस कोडी देवमुख्य सकळ देव संहारले : स्वरूपता होऊनि ठेले :
विचित्र करण बुझो रे भायी : तें कवणें ठायीं सामावलें ॥ २ ॥
आढाळ सूत्र मांडिला लागु : माव हेचि जवनिक :
कासकांचोळी व्रत [वर्त] अवगौनि : बाप संपादी देवता अनेक ॥ ३ ॥
तिहीं लोकां आदि अनादि शक्ती : देव माता जियेतें म्हणति :
व्यक्ति संचारें विकरले : जीव तें कवणें गतीं :
चक्रसामीप्रसादें नागार्जुन जाने हे स्थिति ॥ ४ ॥

---

७ :

कळा–कला-रूप-आकार ।
आकळिता–आकलन होने के बाद ।
कवणु–कवण-कौन ।
रचविता–रचयिता ।
पारुखली–पारख की । परीक्षा की ।
सामावतें–समाया ।
कोडी–कोटी ।
सकळ–सकल-सर्व ।
करण–कारण ।
बुझो–समझो–जानो ।
माव–माया-मिथ्या भास ।
जवनिक–जवनीक-अवगुंठन ।
अवगौनि–जानकर ।
पंच बद्धा–पंच महाभूतों से नियमबद्ध ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ ८ ॥

प्रथम रचलें कवणे गती : सांघपां तेथिची स्थिती :
स्थूळ सूक्ष्म ये दोन्हीं नाहीं : तें विस्तारलें कवणे गती ॥ १ ॥ धृ ॥
बुझो रे बुझो तुम्हें अपरापरु : तेने तरसी भवसिंधु :
अनाथनाथ विचारें शुद्ध : तरी तुझा तुटैल कर्मबंध ॥ छ् ॥
अनंतां विद्या एक विस्तारलें : एक म्हणेति आम्हीं जानितलें :
ईश्वर जानने तें अनौतेंचि केलें : तेंहीं तऱ्हीं संसारा विटंबिलें ॥ २ ॥
शांभवा परतें पर बोलति : तेथ विचार असे एक मती :
अनंता शक्ती अपरा असेति बहुती :
तयां तु निवडुनि चिंतिसी कवणें गती ॥ ३ ॥
अनादिचे च्याऱ्ही पदार्थ बोलति : परि ते कायिसयाचे ऐसे न जानंति :
चक्रसामीप्रशादे नागार्जुन भणे :
जीवां देवतां मळ लाविले कवणिये गती ॥ ४ ॥

---

८ :

सांघपां–सांग बा–वताओजी।
कवणें–कैसी।
तरसी–तर जाओगे।
तुझा–तुम्हारा।
तुटैल–टूटेगा।
जानितलें–जान लिया।
तऱ्हीं–फिर भी।
अपरा–अन्य।
असेति–असती-हैं।
तु–तू-तुम।
निवडुनि–चुनाव कर।
कवणिये–कैसे। किसने।
भणे–म्हणे–कहते हैं।
मळ–मल–मालिन्य।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ९ ॥

। रागु ललित ॥

मूळ सूत्र पंथें त्रिकुट चाळिया : बंधु दिया सिद्ध नाळ :
जागृति चेतना सुषुम्ना वसंति : तै कवण फळ कवण डाळ ॥ १ ॥
रूपीं रूप प्रभा सामावति हो काया : तेथ स्थूळा सूक्ष्मा कवण भेटि :
बीजीं बिंदु पुता आकारू न दीसे : तै कवण कवणके पोटीं ॥ छ ॥
अध ऊर्ध्व योगनाळें : हमें निरधामें सामाउ हो : अवर परतु लाउं एक तंतू :
रजतमशून्यें महींद्र हो शोखू : तै आदि अनादि कवनु हो अंत ॥ २ ॥
घटकी घटना करो हो पंडित : पिंडकुं दुयी पांकोळिका :
जीवका जीवंत शुद्धमें वेगळ : उहां कवणु काचा कवणु पाका ॥ ३ ॥
तन विवरी बेद बैसलाउं हो : धर्मरमते द्वार देवं टाळी :
नागार्जुनका पुता शिरिमुखबचनी : सिद्धांतकी सिद्धि भयेली ॥ ४ ॥

---

९ :

वेगळे–निराले ।
मूळ–मूल ।
कवण- कौन ।
डाळ–डाल
रूपीं–रूप में ।
काचा–कच्चा–अपवित्र ।
पाका–पावन–पवित्र ।
सामावति–समाविष्ट है ।
बुयी–दो ।
पुता–पुत्र । शिष्य ।
सिद्धि–सिद्धता-प्रमाणित ।
भयेली–हुई है ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ १० ॥

अहो स्वयंभ नित्य असे कव्रण : स्वयंभ अनित्य असे कवण :
भवामध्यें ऐसें नेनति :
सुररुषि पंन्नग अन्यथा भ्रमें : अनेक विचारु विवादु करंति ॥ १ ॥ धृ ॥
अहो जाने तो सर्वज्ञ : एक परापरज्ञ दिसे :
एरु जानु अज्ञान : उभय भ्रांतु असे ॥ छ् ॥
अहो नित्या चेतना जाती : बहुता एक एकी व्यक्ति :
असे नसे ऐसे कव्हणी नेनंति निरुती :
जडा नित्या अनित्या व्यक्तीं असती किती :
आदिवंता स्वयंभा ऐसी नेनंति निरुती ॥ २ ॥
अहो कवणें करविलें कवणें रचिलें : कायिसयचें केलें कवणा कार्या :
कवणा भ्रम उपजविला कवणें अवस्थाने :
ऐसे नेनंति प्रमाणें भ्रमित आहाति वायां ॥ ३ ॥
अहो अधिक्रितां पुरुषां जैं जानवीं सर्वज्ञ : तैंचि फिटे भ्राँति अज्ञानबंध :
विधि दासाचा जानौनि धरिला जेहीं :
नागार्जुनाचा दातारु चक्रस्वामी : ते तरलें भवसिंधु ॥ ४ ॥
इति श्रीदामोदरपंडितविरचित चौपदी प्रकरण अन्यव्यावृत्ति निरूपण समाप्त ॥ छ् ॥

---

१० :

भवामध्यें–भव में । नेनति–नेणाति–जानते हैं ।
करंति–करते हैं ।
असती किती–कितने होते हैं ।
केलें–किया ।
निरुती–सुस्पष्ट ।
दातारू–दाता–उद्धारकर्ता ।
वायां–व्यर्थ ।
चक्रस्वामी–महात्मा चक्रधर ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ११ ॥

सर्वैं साहंकार कहंति जोयी : हमें अलक्ष रूप बुझाया :
और विचार न जनंति : बेदश्रुति नेति नेति केउं कह्या ॥ १ ॥ धृ ॥
अवघड हुवो विचारू : आगमी अवसर न ल्हायिजे :
निगमादि क्रमु सकळहीं निर्बीज रहो : तेहीं कैसा जाणिजे ॥ छ् ॥
तेहींका पार न पायिजे अनंत पुरुखादि मारग भया हो :
ते देवयी शुद्धि न जानंति :
जो जाहा राता तो ताहा ध्याये काजें : कहति वो हमारी ऊर्ध्वगति ॥२॥
अपार और विचार : थोर शांभव अगड लंघी केउं जायिबो :
अनंतें ब्रह्मांडें रोमरंध्रों रुकाया : त्या रूप कैसी परी देखिबो ॥ ३ ॥
ऐसी थोरी कांतां माया : ते न देखे अगाध निर्गुण रूप :
चक्रसामीप्रसादें बोलंति : नागर्जुन योगी हो :
त्रितय न जानंति न देखे रूप ॥ ४ ॥

---

११ :

कहंति–कहते हैं।
जोयी–जोगी।
केउं–क्यों-कसे।
साहंकार–अहंकार के साथ।
बोलंति–कहा करते हैं।
जानंति–जानते हैं–मानते हैं।
अवघड–कठिण।
अगड–आगल-विपुल।
ल्हायिजे–लाओ–लगाओ।
सकळही–सारा, सभी।
चक्रसामीप्रसादे–चक्रधर स्वामी के प्रसाद से।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १२ ॥

॥ राग भैरव ॥

आदिनाथरूप न जानंति कोयी : आनि कहंति हौ मुक्ता हुवा :
नवही खंडें तुम्हें जावो हो बा वांयां : दशमदीप मोक्षु न पाया ॥१॥ धृ॥
खोजौ हो तम्हे खोजौ हो : अलक्ष रूप बुझायी :
जेनें तुम्हें जाया सो पर मारो : बैरी झने त्याको होयी ॥ छ् ॥
ते भवीं भवंतां मुक्त मानिती : शब्दें पार न पायिजे :
तत्त्वबिचार न जानंति भहुरा अमृत बोलति :
तिन्हें केउं अमरा होयिजो ॥ २ ॥
ये पुहपगंध भुगावंति बास ल्यंति : परिमळ केउं देखंति :
अपरें गताबिन परें केउं मुगुतां : ते मिथ्या ग्रंथ धरंति ॥ ३ ॥
आदिनाथबाणी कथिता हो : तेन्हें अक्षरे भव तरावया :
चक्रसामीपसायें बोलति नागार्जुन योगी हो :
तेही दशमदीपपदी मोक्ष पाया ॥ ४ ॥

---

१२ :

जानंति–जानते हैं ।
हौ–हौं-हम ।
भहुरा–भौंरा ।
होयिजो–होंगे ।
वांयां–वाया-व्यर्थ ।
मुगुंतां–मुक्त ।
पसायें–प्रसाद से ।
बास–गंध ।
धरंति–धारण करते हैं ।
तरावया–तरने के हेतु ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १३ ॥

तनु मनु पवना जया अधीन : तयासि नव्हे जवं भिन्न :
नळिकाबंध शुक तैसो रे भया : करीसि ते होये बंधन ॥ १ ॥ धृ ॥
दिगंबरा धुसरा : जटाधरा वनवासा :
ज्ञानेविन वेष धरिता : न तुटंति भवपाशे ॥ छ् ॥
दारूको पूतळी प्रणियेली हो : बेटा कहीं न पसुवे :
देहीको मार्ग साधितां भया : आपुनु मुगुता हुवे ॥ २ ॥
अम्रीत बोलिबो भुख न जायी : अमरपण कैसो होयी :
गुरूबिन आपंपर न बुझंति : मुगुत मानीति जोयी ॥ ३ ॥
आदिनाथबाणी परपंथ हो : बुझिबो सिद्धसंकेत :
चक्रसामीप्रसादें आनंदभरित : बोले नागार्जुन अवधूत ॥ ४ ॥

---

१३ :

जया–जिसके ।
जवं–जैसे ।
नळिकाबंध-पिंजरे में जकड़ा हुआ ।
ज्ञानेविन–ज्ञानेविण-ज्ञान के बिना ।
वेष–पोशाक-बाह्याचार ।
तुटंति–टूटते ।
पूतळी–पुतळी-पुतली ।
मुगुता–मुक्त
अम्रीत–अमृत ।
आपंपर–आप पर भाव ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १४ ॥

॥ राग भूपाळी ॥

लोहो जैसें अळिका तैसेंचि कंनक : कायि केलें परेशें :
बंधु नाही तरि मोचले कवण : काइ त्या गुरुउपदेशे ॥ १ ॥ धृ ॥
जानशब्दसागरीं बुडाले : झाकोळले युक्ति तरंगीं :
गुरुबचन नाम द्रिढ धरूणि : दुस्तर तरले योगी ॥ छ् ॥
आपणचि देवो तरि सेवक कवण : कवणा करावी पूजा :
उत्पत्ति स्थिति प्रळय या तीन्ही अवस्था : तरि भजे तो कवण दुजा ॥२॥
अनादि असे ते न देखति : बोलति आपणचि होति मुक्त :
ऐसे विश्व भुलविलें जयाचिया शक्ती : तो नेनति सोडविता ॥ ३ ॥
हरिहरब्रह्मा आगमधर्म : जयाचे रूप नेनति :
नागदेवो म्हणे चक्रसामीचेनि प्रसादे : होये मोक्ष मुगति ॥ ४ ॥

---

१४ :

अळिका–आसक्ति ।
कायि–काय-क्या ।
लोहो–लोहा ।
झाकोळले–म्लान हुआ ।
द्रिढ–दृढ ।
धरूणि–धरूनी-लेकर ।
दुस्तर–कठिन राहपर ।
देवो–देवता ।
नेनति–नेणति-जानते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १५ ॥

जानें तानें करणें : न मुचा काहींचि कपाटे :
सहजें न मुंचा कहीं : नमा जयाचेनि श्रीमंतें ॥ १ ॥ धृ ॥
नाथा पंथी जीव बापया : बुधिया सूनि माता [था ?] :
ऐसे वायां जातां शरण रिगाया : अनाथ नाथा ॥ छ् ॥
मंत्र यंत्र ध्याने : जयाचा तुम्हां भरवसा :
अन्य अन्याधार वेद : तेही चूकले परेशा ॥ २ ॥
विधियंत्र कर्मफळे : जाना अन्य बुद्धी :
एक परमानंदे साच : जीवां कैवल्यसिद्धी ॥ ३ ॥
अपर चुकऊनि : परी लावियेले जेनें :
भजा तया चक्रसामी : नागदेवो म्हणे ॥ ४ ॥

---

१५ :

जानें-तानें–ज्याने त्याने-सबको ।
कपार–कपार-गुहा ।
करणें-करना ।
वायां–व्यर्थ ।
रिगाया–रिघाय-प्रवेश किया ।
जयाचा–जिसका ।
भरंवसा–भरोसा-आधार ।
तुम्हां–तुमको ।
साच–सत्य ।
परी–परंतु ।
भजा–अनुसरण करो।
जेनें–जिन्होंने ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १६ ॥

॥ राग मंगळ कौशिकु ॥

अंग मोडी पवन झाडी : वळित पळित झाडी :
अप न बुझंति निरंतरी : ऐसेनि हठे तटें मुयी गयी बुडी ॥ १ ॥ धृ ॥
अमरसु कंदु कोयी बखाणे जोयी : कळाविदु बखाणे कवण :
कान्ह कोरांटक रत्न घोखू गयो : दुख डंभा जियो नागार्जुन ॥ छ् ॥
जें जें द्रिष्ट तें तें नाशे चतुर्विधं भूत ग्राम :
नवनाथ सोळा सिध बावन अक्षरांसी :
आणि अष्टकुळ स्थळ जंगम : न पुरंति पूर्णाहूति काळासि ॥ २ ॥
गंगे वाळू विझीं वेळू : एते वेळ मुयी गयी :
ब्रह्मा शंकर नारायण : ते नव्हति कोयी ॥ ३ ॥
गंधर्वनगर छायापुरुष : उहाति सव्य अपसव्यें निर्माण :
नागार्जुन कहंति तै सारा संसार : जळबिंद लहरी खीण ॥ ४ ॥

---

१६ :

हठे-तटे–हठयोगपूर्वक ।
जोयी–जोगी ।
कवण–कौन ।
नाश–नष्ट होता हैं ।
नवनाथ सोळा सिध–नवनाथ और सोलह सिद्धपुरुष
पुरंति–पुरणे-पूर्ण होना ।
वाळू–बालुका ।
वेळू–बांस ।
खीण–क्षीण।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १७ ॥

॥ राग भैरव ॥

पांचांचें केले अप मानंति : दुःखा सुख भाव भाविति :
ऐसें भुलविलें जेनें तया नेनंति : तेने होये प्रळये उत्पत्ती ॥ १ ॥ धृ ॥
सांडिलो आम्ही मोहे हो जोयी : नाथिलीं कर्मकर्मकी गति :
अपरांपर बुझलों हो भायी : नाही अधऊर्ध्व गति ॥ छ् ॥
भवीं भवंता मुक्त मानंति : पशुवा बंध नेनति :
आनाचा करणी आन उपासंति : तवं तवं तुमी सांपडंति ॥ २ ॥
गुणी गुंतले आशा बांधले : ते निजपंथ चूकले :
संवचोराचेनि संगे लागले : ते नगरपुरी नागवले ॥ ३ ॥
नाथाचेनि नाथे : तारिलो सन्निधी सुखसागरें ।
नागदेवो म्हणे अभयंकरे : निजरूप दाऊनि श्रीचक्रधरें ॥ ४ ॥
॥ इति श्रीदामोदरपंडितविरचित चौपदीया प्रकरण अन्यसाधनव्यावृत्ति निरूपण समाप्त ॥ २ ॥

---

१७ :

भुलविलें–धोखादिया।
जेने–जेणे-जिसणे ।
तेने–तेणे-उसने ।
सांडिले–छोड़ दिया-त्याग दिया ।
सांपडंति–सापडति-मिलती हैं ।
मोहे–मोह ।
चूकले–चुकले-भटक गए ।
नागवले–लूटे गए ।
दाऊनि–दिखाकर ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

। १८ ॥

॥ राग गौडी ॥

नवनाथ कहे सो नाथपंथी : जुगुति कहे सो जोगी :
विश्व बुझे सो बैरागी कहिजे : ग्यान बुझे सो योगी ॥ १ ॥ धृ ॥
तुम्हे सुनो हो सिद्धांत गुरूवा : सारा ग्यानपंथु हमारा :
शून्य निरशून्य काहेकु कहिजे : ब्रह्मादिक न जाणंति पारा ॥ छ् ॥
शिवशक्ति समा जुक्ती कवण युक्ती तुम्हे जाया :
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चंद्रसूर्या भ्रमण करिता श्रमाया :
हो पूछो तांखे श्रुतां पंडित : इंद्र केती बार आया :
बत्तिस मुखका ब्रह्मा प्रत्यक्ष : कवण युग तुम्हे पाया ॥ २ ॥
पंचकृष्ण खेले माहो जे कां श्रीकृष्ण किन्हें जनाया :
कवण ते युग कवण तें स्थान निजरूप काहां समया :
सारमें सार बुझंति बिरला तत्त्वज्ञान जिन्हें पाया :
कळिमध्ये बदंति ज्ञानी सव लोक धांदे लाया ॥ ३ ॥
अलेखू कहिजे सो अपरांपरू हो जीवु कहिजे सो अविनाश :
उत्पत्ति प्रलय दुयि घडिमोडि हुवा संकेतु :
श्रीचक्रसामीप्रसादें नागार्जुन बदंति : श्रीकृष्ण राउळकेरे दूत ॥ ४ ॥

---

१८ :

कहिजे–(म्हणिजे) कहा जाता है। **बैरागी**–विरक्त पुरुष।
काहेकु–क्यों। **जुगुति**–जुगत-युक्ति।
जाणंति–जाणती-जानते हैं। **पारा**–पार-गंतव्य।
तांखे–तुमको। **केती**–किती-कितनी।
श्रुता–श्रवण करो-सुनो। **किन्हें**–किसने।
काहां–कहां। **तत्त्वज्ञान**–परम अर्थ का ज्ञान।
कळिमध्ये–कलियुग में। **बदंति**–वदति, बोलते हैं।
लोक–लोग। **अलेखू**–अलक्ष्य।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ १९ ॥

॥ राग तुंडी ॥

दीसे ते निरुवाण कैसें बुझावे हो पांडया : जालें सगुणासारिखें हो भारी:
हमें अवधुतराजे तरि अमुला पिया : प्रभु पूजों अभ्यंतरीं ॥ १ ॥ धृ ॥
काळ डंकु निसान बाजे : हमें थाप उधारो करंकर पूयी रूयी :
काळ वेळ दोन्हीं तोंडी मारो : सुनो हो मुनिराजा भायी ॥ छ् ॥
काळ वेळ क्रमे क्रिया हो अजपा री : संचारु संचरत भारी :
भणौनि पूर्वपश्चिम उत्तरे हो रिगो : काळ ताळ जीनो भारी ॥ २ ॥
एकिकि प्रव्रिति ते बहूदेवी आकार : सब शक्तिचक्र मंडदारी :
आदिनाथकी महंती कवने कवन हो बुझावी :
परि कथियेली हो भीतरी कुसरी ॥ ३ ॥
अवर पर हो एकी कायीं निफजले : परि पाहिजे त्रिपंथ क्रिया :
परावर देखने अवरीं भ्रांति : जाने हो तो बिरला लोकी :
नागार्जुनप्रसादे विवेक संभवला : भणौनि दोहीं पक्षी जाले रूप ॥ ४ ॥

---

१९ :

दीसे–दिसे, दिखाई देता है
जालें–जाहलें हुआ।
अभ्यंतरी–अंतरंग में।
संभवला–संभव हो सका।
काळ–काल।
वेळ-वेला–समय।
तोंडी–मुँहपर।
पाहिजे–चाहिए।
बुझावे–समझी बुझाकर बताये।
सारिखे–समान।
निफजले–निपजले-उत्पन्न हुआ।
भणौंनि–म्हणौनि-म्हणून-इसीलिए।
काळडंकु–काल का डंका।
दोन्हीं–दोनों।
कथियेली–कही हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ २० ॥

॥ राग वेलाउळी ॥

जैसे सागरीं तरंग होती : उपजौनि तेथेंचि विलया जाति :
अचळ तें बुझैं सिद्धसंकेते : ब्रह्मादि पदें नाशति ॥ १ ॥ धृ ॥
जयाचेनि अनुभवे : नाही निद्रा स्वप्न :
तो सुरनाथ बुझ लों : आता न मजो आना कवणा ॥ छ ॥
बीजीं उत्पवन बीजींचि फळ : ऐसी हे भवरचना :
पशुवा न बुझंति या मूळ कवण : कवणे होय वेदना ॥ २ ॥
अथ उपरी बाहिजभीतरी : पाहातां सचराचरीं :
एक तो आयागमन निवारी : सकळही जया भीतरी ॥ ३ ॥
तमनाशन एक दिनकर : तैसा असे मार्ग परु :
नागदेव म्हणे दाता चक्रधर : तो एक वेदविदां आगोचर ॥ ४ ॥

---

२० :

सागरीं–सागर में ।
उपजौनी–उत्पन्न होकर ।
जाति–जाती-जाते हैं ।
नाशति–नाश होता है ।
आना–अन्य-दूसरे ।
कवणा–कोणा-किसीको ।
हे–ही-यह ।
कवणे–कवणा-किसको
बाहिज–बाहर ।
पाहातां-देखते हुए ।
आगोचर–अगोचर ।
निवारी–निवारण करता है ।
सकळ–सकल-सर्व-सब ।
परू–पर-परम ।
म्हणे–कहे ।
जया-जिसके ।
आगोचर–आगोचर-अगम्य ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ २१ ॥

॥ राग भूपाळी ॥

आदि अंती एक असे । मध्ये जाला विकार :
एकामिश्रित जेनें केल : मे तयाचाचि विस्तार ।। १ ॥ धृ ॥
न बुझंति पशुवा : वस्तुको निर्धार :
जडचेतन कैसो होयी : ऐसा नेनंति विचारा ॥ छ् ॥
एक शून्य एक अशून्य : एक तें शून्याशून्य :
एकी कायी तयां वासु : ऐसे न जानंति अज्ञान ।। २ ॥
वस्तुजाती नानाविधा : वहुती जाती व्यक्ती :
वस्तुजाती पांचामध्ये द्वया वासु : एक तें नाना व्यक्ती ॥ ३ ॥
हे जानवी आदिनाथु : नागदेवास्वामी परेश :
तेंचि होये सत्य : असत्यवस्तुप्रकाश ॥ ४ ॥

---

२१ :

असे–है।
मध्ये–मध्य में।
जाला–जाहला-हुआ।
जेने–जिसने।
केल–किया।
तयाचाचि–उसकाही।
नेनंति–नेणति-जानते समझते हैं।
जानंति-जाणति-जानते हैं।
बहुती–अनेक।
नाना–अनेक।
जानवी–जाणवी, परिचय करा देता है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ २२ ॥

एका चतु:प्रकारी नाशु नाही : तेथ दुजें कार्य भूलियो जालें :
आनिका पदार्था एकी : अविद्यामय म्हणितले ॥ १ ॥ धृ ॥
जया अंतरीचा बुझो : परगुरुप्रसादें परपंथे :
उपदेशिले जेने पै : आनाथाचेनि नाथे ॥ छ् ॥
एक निरयां संपूर्ण गयी : एकां तेंविचि हानि नाहीं :
एक निर्मूळ प्रसिद्ध : ऐसें सिद्धसंकेतें पाही ॥ २ ॥
एक अनेक आकारे : विस्तारले अनेक आकारीं :
उच्चनीचा समान : जेथ त्रिविधा वेदाची पायीरी ॥ ३ ॥
एक अक्षर द्वितीय अक्षर : क्षराक्षर ते नव्हे भिन्नाभिन्न :
हे श्रीचक्रसामी विदित : केलें नागार्जूना ॥ ४ ॥

---

२२ :

नाशु–नाश ।
दुजें–दूसरा ।
जाले–हुआ ।
आनिका–आणिक-अन्य ।
म्हणितले–कहते हैं ।
जेने–जिसने ।
पै–पादपूर्वक अव्यय ।
जया–जिसका ।
पायीरी–पायरी-पैडी ।
पाही–देखें ।
विस्तारलें–विस्तार हुआ ।
आकारीं–आकारों में ।
जेथ–जहाँ ।
केले–किया ।
नव्हे–नहीं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ २३ ॥

अनादिंची दोन्हीं एकीचि पाइं : एक नाशे एक न नाशे :
अचेतनाचें कार्य चेतनी : चेतनीचे अचेतनी दीसे ॥ १ ॥ धृ ॥
बुझतां तरि च्यान्हीचि पाये : परि हे सोपें नव्हे :
हे विचारितां जन्मचि जाये : परि अशेष उरलेंचि आहे ॥ छ् ॥
एका सानयाचें जालें थोर : दोन्ही बहुतां आधार :
जयापासूनि जे उपजे : सेवटीं ते तया आहार ॥ २ ॥
एकापासुनि चतुर्विध वेद : तेही नव्हे तुर्यासम :
जगत्रयव्यापक विभक्त एक : स्वरूप ते निरुपम ॥ ३ ॥
आनाचा कारणी : एक अभिमानु : दोनि घेऊनि च्यारि देने :
हे चक्रसांमी जानवी : तेंचि जानिजे : ऐसे नागार्जुन म्हणे ॥ ४ ॥

---

२३ :

दोन्हीं–दोनों।
दीसे–दिखाई देता है।
नाशे–नष्ट होता है।
च्यान्ही–चार।
उरलेंचि आहे–बाकी है-शेष है।
सानयांचें–सान। छोटा-छोटे-से
थोर–बड़ा।
बहुतां–बहुतों को-अनेकों को।
सेवटीं–शेवटी-आखिर।
सोपें–आसान।
आनाचा–अन्य विषयक।
अभिमानु–अहंकार
घेऊनि–लेकर।
देने–देणे-देना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ २४ ॥

॥ राग देशाकु ॥

सुता परिसैं हें असें : निज बीज़ीं बुझे तो जाणे :
परावेनि संगें सपन चाहे : धाव घेतो आले निमाणे ॥ १ ॥ धृ ॥
अचरिज सिबना बुझो हो पंडित : बारितरंग पामरा न संघे :
पुरुषार्थ स्वप्नी लुकाया : तो कवणी परी जागे ॥ छ् ॥
आचारे विचारे चक्रसामी : संसार सपनमांहें तिन्ही दिठा :
नाना फळे चाखाया : परि नाग नसे मीठा ॥ २ ॥
अगणित काल गयो हों भायी : गया ते सृष्टिरचना :
पाहुना न फीटे मीं तु न दीसे : बापु दृघ संताना सिवना ॥ ३ ॥
को जाने कवण निद्रित : जागा होऊनियां आनित असे घेवो :
कहंति नागार्जुन योगिराजे : जिन्हे बहुत उठाया :
सो चक्रसामी को : रस सेवो ॥ ४ ॥

---

२४ :

परिसैं–दिखाई देता है-देख लेना ।
हें–यह ।
असें–इस प्रकारका-इस प्रकारसे ।
निमाणे–निर्माणे-बनाये ।
सिबना–से बना ।
पामरा–पामर को-क्षुद्र मनुष्य प्राणी से ।
लुकाया–छिपाया ।
चक्रसामी–चक्रधरस्वामी ।
नाना–अनेकविध ।
सपनमांहें–स्वप्नामध्ये-स्वप्न में ।
दिठा–दीठ-दृष्टि ।
फळे–फल ।
जागा–जागृत ।
आनित–आणीत-लाना-लाते हुए ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ २५ ॥

॥ राग शुद्ध रामग्री ॥

अभिनव चोज देखिले हो बापा : कवतुक नवल हो जालें :
चक्रची वर दंडसमवेत : कुंभें कुलाल लुकावले ॥ १ ॥ धृ ॥
आम्हीं विकटें हो : विकटीं खेळीं खेळु खेळुतें :
सतगुरुरायाचे चरण : ध्यातां बुझलों सिद्धसंकेतें ॥ छ् ॥
मुखके शून्य रेखा न घालुनी : सरवही संवति संचिया :
तोंही आपण गया भूमीं राहुनी : एरा [आ] ठां दीशां भूलि ठेया ॥ २ ॥
मुंगियो तोंडें हाति गिळूनि : आपण भूमींमाही नाथी जायी :
विपरीत चोज देखो हो जोयी : मातें मानुस भखाइ ॥ ३ ॥
पिंपळा लाख जऱ्ही लागली : तऱ्हीं तो सिंचन कीजे :
तैसा हा केवळु बुझोनि राही : नागदेव म्हणे जोयी भला होयी ॥ ४ ॥

---

२५ :

जोज–(चीज), वस्तु ।
बापा–भाई ।
जालें–हुआ ।
कुलाल–कुम्हार ।
घालुनी–घालणे, डालना ।
गिळूनि–गिळणे-पान करना ।
जोयी–जोगी ।
मातें–मातें (माता के द्वारा)
देखिले–देखी ।
कवतुक–अचरज ।
मुंगियो–मुंगी-चींटी ।
ध्यातां–ध्यान करते हुए, पूजन करते हुए ।
तोंडें–तोंड-मुँह ।
भूमींमाही–भूमि में ।
मानुस–माणूस-मनुष्य ।
जऱ्ही–जरी-यद्यपि ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ २६ ॥

गयनी उतपत्ति : गयनी लो रे आप तो गयनीसम :
आभासको भास तैसो बुझो : माया केरा भरमु ॥ १ ॥ धृ ॥
तैसो रे भवविचारु : रज केरा भुजंग :
गुरुपसायें बुझंति जीयी : न बुझै पैं हा जग ॥ छ् ॥
सपनिको धन अलिको सांचा रें : जेंवि प्रबोधीं न होयी :
निहालिता सब म्रिगजाल रें : कदलीगर्भ बुझंति जोयी ॥ २ ॥
पवनपेलित भूमीको रजु रे : जेवि गगन चढायी :
नाथिली उतपती स्थिती लयो भायी : जांहांका तांहा त्वयां जाइ ॥ ३ ॥
सारासार वे निर्वाळिले : प्रभू आदिनाथ वाणी :
नागादेव म्हणे आम्ही रंगलो : श्रीचक्रसामीचा चरणी ॥ ४ ॥

---

२६ :

तैसो–उस प्रकार ।
पसायें–प्रसादें, प्रसाद के कारण ।
भरमु–भ्रम ।
गुरुपसाये–गुरुप्रसाद-से ।
हा–यह ।
जेंवि–जैसे ।
निहालिता–न्याहाळिता-देखते हुए ।
म्रिगजाल–मृगजल ।
नाथिली–नष्ट हो गई ।
उतपती–उत्पत्ति ।
म्हणे–कहे ।
आम्ही–हम ।
रंगलो–रंग गए-रम गए ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ २७ ॥

स्वयंभु पदा ग्यान कैसी व्यवस्था : ऐसें प्रमाने नेनति :
प्रमाणी प्रमिते त्येंहीं नेनंति : अन्यथा श्रमें बोलति ॥ १ ॥ धृ ॥
त्रया भासतिया नेनति अनुवादो : ते परा जाने निरुति :
अनाथानाथ अनुवादे प्रव्रिती : जे अधिक्रित जन होती ॥ छ् ॥
पश्यंति या फळा थार देखिले : जें प्रत्यक्ष लिंगी बोलिले :
मध्यमा लोका आधार देखिले : ते पर पुराणीं सांगीतले ॥ २ ॥
वैखरिया अधिष्टान देखिले : पैं ते परिखां मनुजीं बोलिले :
आणि प्रपंचाची व्यवस्था जाने परेश : जें परवेदांतीं सांघीतले ॥ ३ ॥
सर्वांची व्यवस्था जाने परेश : सर्वज्ञ रावो चक्रेशु :
तेनें नागार्जुना सांघीतले : सर्वही जैसें तैसें भिन्न अशेष प्रकाश ॥ ४ ॥
॥ इति श्रीदामोदरपंडितविरचित चौपदी प्रकरन महावाक्य निरूपण समाप्त ॥

---

२७ :

ऐसें—इसप्रकार ।
श्रमें—श्रमपूर्वक-कष्टसे ।
भासतिया—मालूम होता है ।
अधिक्रित—अधिकृत ।
आणि—और ।
जाने—जाणे-जाणता है-चिंता करता है ।
सांघीतले—सांगितले-कह दिया ।
तैसे—तसे-उसप्रकार ।
नेनति—नेणती-जानते हैं ।
त्रया—तया-उन्हें ।
प्रव्रिती—प्रवृत्ति ।
पैं—पादपूर्वक अव्यय ।
प्रपंचाची—प्रपंच की-चरितार्थ साधन की ।
तेनें—तेणे-उसने ।
रावो—राजा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ २८ ॥

एक आंत बाहीरी एति जाति : दुयि शंगती बाखानंति :
एकि मुखीं एकि पदी :
एकि छाया वेगळी न दिसे : एकि बैसली : ईश्वरतत्त्वीं समाधी ॥१॥ धृ ॥
सुनो हो बाबा बीज सुरंगा : परपंच रचना देख नवरंगा :
एक कंद सब अकारु जाला : बिचारु बिसमित जाला ॥ छ् ॥
नव दरवाजे पुढ़ां दोनि गाभारे : खिडकिया तीनि तंमाळा उच्चा :
हमारे सामी पूढां बैसका वानं : तेथ सब देवीका मेला साचा ॥ २ ॥
देवी भणितले माहामाया रे पुता : क्रिया हमारी माता :
मुदल पुरुखकी आवडि हो भायी : आंतु बाहिज एकां कथितां ॥ ३ ॥
कैसी चिन्हे वोळखि वोळखावी : भीतरीं सांटवण वोळखावा हो देवो :
नागार्जुनसामीने कथन किया हो : तेथ सब संचरितु सांत्रीतले जीवा ॥४॥

---

२८ :

आंतु–आंत-अंदर ।
जाला–हुअत ।
बिसमित–विस्मित-आश्चर्यचकित ।
पुढ़ा–पुढे-आगे ।
अकारू–आकार ।
कंद–जड ।
आवडि–आवडती-मनचाही ।
मुदल–मूल ।
सामी–स्वामी ।

बाहीरी–बाहर ।
बाखानंति–बखान करते हैं ।
परपंच–प्रपंच-सांसारिक ।
गाभारे–गाभारा-गर्भगृह ।
भणितले–म्हटले-कहा ।
आंतु बाहिज–अन्तर्बाह्य-भीतर और बाहर ।
सांटवण–सांठवण-रक्षित ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ २९ ॥

॥ राग रामग्री ॥

एकु अंधा एकु पंगा रे भायी : एकने एक लिया खांदीं :
दुयी पुरुख मिलकर एकूचि हुवा : सृष्टिपक्षी वेवादी ॥ १ ॥ धृ ॥
शून्य बुझो शून्य पर हो बुझो : शून्य निरशून्य दुयी भाग :
नागार्जुन पुरुखे कथन किया हो : जीवका जीवंतु समजोगे ॥ छ् ॥
आया हो भायी ब्रह्माण्ड पिंडा : सब विटंबुका दळवाडा :
दोनि पक्ष जाले एके पक्षें ठेलों : बुझलो त्या आगडा ॥ २ ॥
लवनाथूनि तेंचि बाबा नागवण : कंचन रूपी न दीसे कहीं :
तुटलें सादें ऐसा चातुक एकु बाबा : मां सागरू उत्तरिजे बाही ॥ ३ ॥
सुख दुख किया हमेंचि पाया : ऐसा कोयी नहीं भेदा :
नागार्जुनप्रसादे शिरिमुखवचनीं : न कळे वेदांते हमें सिद्धा ॥ ४ ॥

---

२९ :

पंगा–(पांगळा) पंगु ।
खांदी–कंधेपर ।
आगडा–आगळा-निराला ।
लव–निमेष ।
दुयी–दोनों
एकूचि–एक ही ।
दळवाडा–दलवाड-समुदाय ।
नागवण–धोखा प्राप्त होना-लूटा जाना ।
शिरिमुख बचनी-श्रीमुख वचनोंसे ।
कळे–जाने-समझे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ ३० ॥

॥ राग रेवागवितु ॥

एक जागा एक सुता रे भया : बेनि खवना भंगी चढिबो :
भव रिदें तासु ताखा न जोखाया : एरु जागा निहला वास पाहिबो ॥१॥ धृ ॥
कत भूलिबो रे : झाकत मूढ़ भूलायी:
तत्वविचार न जानंति जोयी : ब्रिथ्था पंडित मनायी ॥ छ् ॥
आघें नागा पाछे कथा पहिरे : लोकमध्ये लाज न धरे :
अष्ट भोगी मंगळे गीती गायी : तो न्हान वारा कळशी न्हाये रे ॥ २ ॥
सप्तद्वीपे सरग पाताळे : वऱ्हाड मला मीलीबो :
काळरातीमध्ये सबही मारि जाली : तेय कवण जागा सुता धरिबो ॥३॥
आदिनाथ माया बीचिया लोयी : बाखान कैसो पढिया सो :
नागदेवो म्हणे चक्रसामीविन : हा जगु भुयीसीं भुजे सो ॥ ४ ॥

---

३० :

सुता–सोता-सोया हुआ ।
सवना–कानों से सुनकर ।
भंगी चढिबो–भावभंगिमा में चढ़ गया ।
निहलावास–निश्चछ्वास ।
ताखान–तत् क्षण ।
ब्रिथ्था–वृथा ।
आघे–आगे ।
कथा–कंथा-चोला-कफनी ।
लोकमध्ये–लोक में ।
झाकत–देखता है ।
न्हान–स्नान ।
काळरातीमध्ये–कालरात्रि में ।
लोयी–लोग ।
वाखान–बखान-निरूपण ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३१ ॥

एकोचि जीवां या दोघदोघा एकत्र असने : परि एरु एरां ते नेने :
मानाचा कारणी अनांसिर धरणें : संगातें एने जाने ॥ १ ॥ धृ ॥
खेळु मेळ वैजातिया : बाळां लाविलेला माया :
आपण प्राणपतीची आज्ञा न लंघी : निजभुवनी राहुनिया ॥ छ् :
एकी वाचि केली मंदिरें : तियें जालीं धूळीधूसेरें :
उच्च निचा एता जाता : वायां सीनलीं गवारें ॥ २ ॥
हीने जातीचे : गोसांवीं जालें : उसमे जातीचे पाइक :
सुटतयां बंधा चांग नियामक : आपण वेगळा होउनि पाहे कवतुक ॥३॥
बापाते जानौनि धरीति सोये : तयासि उदास होये माये :
हे कथिलें नागार्जुनें : श्रीचक्रसामी पसायें ॥ ४ ॥

---

३१ :

असने–असणे-होना ।
नेने–नेणे-नसणे-न होना ।
आनाचा–अन्यविषयक ।
लंघी–लांघना-उल्लंघन करना ।
धूळी धूसेरें–धूलिधूसरित ।
निचा–नीच ।
हीने–हीन
चांग–अच्छा ।
सीनलीं–शिणली-त्रस्त हुई ।
जालें-झाले-हो गए ।
वेगळा–निराला-अलग ।
कवतुक–कौतुक-आश्चर्य ।
जानौनि–जाणोनि-जानकर ।
पसायें–प्रसादें-प्रसादसे-कृपासे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३४ ॥

इतुलयां दीसां आम्ही जानितले : मायेचें वडिलपण :
संगे संगे सवें सवें हिंडतां एव्हडे जालो :
परि पितयाचे नेनोंचि ग्यान ॥ १ ॥ धृ ॥
कहीं नव्हतां बापे बोलाविलों : भणौनि तयापासि गेलो :
निन्हियां लोभाळु सांडु न शको : भणौनि तया अव्हेरिलों ॥ छ् ॥
आपणचि घरी आपणचि दारीं : आपणचि सचराचरीं :
भुलेचियें वेळे अवघीचि गीळी : ऐसी ते विपरीत नारी ॥ २ ॥
बहुत प्रसवली परि ते करणकुमारी : पतिविन न न्हाये एकली केव्हळी :
अवधिचे सृष्टींची कवळूनि ने आनी : परि नेदी जावो पितयाजवळी ॥ ३ ॥
माये लांवं ऐसे आम्ही जाणितलें : म्हणउनि वेगळावलों :
चांगलि नागदेवे बुद्धि दीधली : म्हणउनि चक्रस्वामी धरुणि केलो ॥ ४ ॥

---

३४ :

इतुलयां–इतने ।
दीसां–दिनों में ।
वडिलपण–बड़प्पन ।
सवें-सवें–साथ-साथ ।
हिंड़तां–घुमते हुए ।
एव्हडे–इतना ।
नेनोंचि–नेणेंचि-नहीं जानते ।
नव्हता–नहीं था ।
भणौनि–म्हणौनि-इसलिए ।
तयापासि–उसके पास ।
केव्हळी–केवल ।
वेगळावलों–अलग हुआ ।
चांगलि–चांगली-अच्छी ।
दीधली–प्रदान की ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३५ ॥

॥ राग धानाश्री ॥

अनादिची देवी माया भूतें संभवली : स्रिष्टि केली हो रचना :
एक जीव गेले एक जीव जाले : एक असेति हो निराजनी ॥ १ ॥ धृ ॥
ऐसी दीक्षावती दीक्षा लवो रे भायी : तेथ एकचि परिसिलें :
माया अयोग्या नेमिलें संत झांकोळिलें : ते बुझो कथौनि भलें ॥ छ् ॥
जीव का पूर्व हो एकैका पूर्वा आत : हा तंव सारासार धागाधा [?] :
सुखमनी संचरुणि केला : तेने द्वारे वेधला हो सुध्यंति शुद्धा ॥ २ ॥
कळिका कमळ हो अधिकारे निफजे : बीज संचरावया मुख जाले जाया :
गेला पदार्थ अर्थी विसंवला : तेसा भाव जोडिला: निवडिला हो भला ॥ ३ ॥
कवने जानावे कवणे कथावे : भरवस पाटन हमारा :
नागार्जुनप्रसादे ईश्वरवचनी : सब आगमसिद्धान्त हमें उधारा ॥ ४ ॥

---

३५ :

संभवली–संभव हुई ।
स्रिष्टि–सृष्टि ।
परिसिले–जान लिया ।
नेमलिं–नियुक्त किया ।
झांकोळिलें–नीचा दिखाया ।
भले–अच्छा ।
निफजे–निपजे-उत्पन्न होता है ।
जाले–हुआ ।
गेला–गया ।
जोडिला–जान लिया ।
निवडिला–चुन लिया ।
जानावे–जाणावे-जाने-समझे ।
जया–जिसको ।
उधारा–उद्धार किया ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३६ ॥

बुढी म्हातारी थेरी रे : लांचेबिन थान न सूये :
लांचू रे खाऊनि सवेंचि बुखली : पिता कवण ऐसे नाम नये॥१॥ धृ ॥
खटबाज पर भीथरी रे परघरी वसतासि :
हा बोलु पाहतां कहंति : आझुई रे जनकाकडे न पळासी ॥ छ् ॥
भवब्रिछुमध फळी बो रे : या या शाखी न भला हुंवा :
सो तुं न खायीं संगे रे : सेवितां रसाळ तो नसे निच नवा ॥ २ ॥
आपे ठायीं तुं भवीं : घुसी घुसी नाठी जासी :
अपाया ने दी संचळ रे : आठवी गुरू भणंति तेणे मुगुत होसी ॥ ३ ॥
लुकी लुकी तुं वसतासि : सिद्धांतेंविन परपंथी
आदिनाथ चक्रसामीपसाये : नागदेव ऐसें बोलंति ॥ ४ ॥

---

३६ :

म्हातारी–बुढ़िया ।
थेरी–जर्जर स्त्री ।
सूये–सूझे ।
हुंवा–हुआ ।
भवा ब्रिछुमध–भववृक्ष के मध्य ।
फळिबो–फला ।
नाठी–नष्ट हो जाता है ।
मुगुत–मुक्त ।
लुकी लुकी–छिप छिपकर ।
विन–विण-विना ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३७ ॥

॥ राग कनडा ॥

एकि मायी और बहुत धाया : नाना पेहे करू पान :
सेंपरि लावो हौर बापा : खायातें आम्ही अग्यान ॥ १ ॥ धृ ॥
विपरीत चोज सुनो रे लोक हो : कहता कोयि न बुझे :
यज्ञकेर पशूसि निधारिले : मुरखा मरण न सूजे ॥ छ् ॥
एकी गळ उसमध्ये वाया : हमारे आग काढो न संडी :
सेपरि लावो हौर बापा : खाया ते आम्ही आवडी ॥ २ ॥
बीजी बाउल गुण केरा हो : तेही भावे मोरो चित्त :
सेपरि लावो हौर बापा : खाया ते आम्हीं अम्रीत ॥ ३ ॥
और ती जीप देशिनी [?] : मेलायी ते मोरो बापें :
कहंति नागार्जुन आम्ही पोसिलो : सो दाया भले तियापरि नांदो सापें ॥४॥
॥ इति श्रीदामोदरपंडितविरचिते चतुष्पदीप्रकरणे संसरणनिरूपण समाप्त ॥ छ् ॥

---

३७ :

नाना–अनेक
चोज–चीज-वस्तु ।
निधारिले–निर्दाळिले-निर्दालन किया-मार डाला ।
उसमध्ये–उसमें ।
बाउल–बावला-बाऊल संप्रदायी ।
आम्हीं–हमारे लिए ।
अम्रीत–अमृत ।
पोसिलो–पोषित हुए ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३८ ॥

भीडी भीडी कथन जोयी : निद्रा समसान जायी :
बीलीमध्ये हाती समायी : तैंसो बुझो आम्हांरो आतमग्यांन
रे भायी ॥ १ ॥ धृ ॥
कैंसो रे भवबिचारु : रजतम तजीं गुरुउपदेशे :
जाऊंनि मिलो : देखो एकेचि प्रकाशे ॥ छ् ॥
बुझो बुझो हो : अंधा पायाळ होयी :
मूकियो सपन दीठो रे : अंजनबिन जोयी ॥ २ ॥
आतमा नादीं बींदी हो : सरवांगी खत जायी :
अनातमां आतमप्रतीति : तैंसो आम्हां आम्हारो आतमग्यान रे भायी ॥३॥
जनंकी जनकु तोडो हो : कुंडलनी उपरि चढो हो :
उसे हमे युगता कहो : प्रतिबिंब निर्बाणी आप बुझें :
नागदेव म्हणे चक्रसामीपसाये : निरूत रचा हो ॥ ४ ॥

---

३८ :

समसान-श्मशान ।
बीली–बिल-छिद्र ।
हाती–हाथी ।
समायी-समाता है ।
पायाळ–पायाळु-चल सकने वाला ।
जोयी–देखता है ।
बींदी हो–बिंध गयी हूँ ।
आम्ही–हमको ।
तैंसो-तैसा-उस प्रकार ।
युगता–युक्ति ।
निरूत--निरूपण ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ३९ ॥

॥ राग देशाकु ॥

मुकेनि सपन दीठो रे : अनुवाद करे कवण :
तैसो रे भया परपंथी : असे आतमग्यान ॥ १ ॥ धृ ॥
बहुत मारग बोलति : सिद्धसाधक जोयी :
आदिनाथ अनुभवेविन : परपंथी आनिक अनुवादु नाही ॥ छ् ॥
अष्टधातु विचित्र रूपा : आनंत दान :
परिसी लागेति कनक जेवि : होये निसबद ॥ २ ॥
खड्रसा भेदवाद नाही : अम्रितपानी :
मना वाचे पैसु नाही : ब्रह्मज्ञानी ॥ ३ ॥
आनां घेतां देतां जाने : अगोचर सचराचर :
नागदेवें दीठो : पररूप चक्रधरू ॥ ४ ॥

---

३९ :

मुकेनि–मूक को ।
दीठो–दिखाई दिया ।
अनुवाद करे–वर्णन करे ।
कवण–कौन ।
जोयी–जोगी ।
अनुवादु–अर्थ ।
जेवि–जैसे ।
आनंत–अनंत ।
अनुभवेविन–अनुभव के बिना ।
आनिक–आणि-और ।
निसबद–निःशब्द ।
भेदवाद–भेदभावना ।
दीठो–दिखाई दिया ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४० ॥

नाथिली उतपति स्थिति जोयी : जेवि सपण मनोव्रिति :
निजपद सांडूनि लोकां सोहतां जाला : तेही उपजविली भरांति ॥१॥धृ॥
बुझो रे बुझो साचाचे जोयी : आपणपे दीसे केवी :
जेनेविन बंध मोकले ना : तो परू निरंतरं भावी ॥ छ् ॥
सुख दुख मानु अपमानु : कामक्रोध जिनिला जेही :
आदिनाथ नाथ जालया : पूण्य पापें नाशति हीं ॥ २ ॥
भीतरि भीतरि पाहातां : जेथें दुसरे न दीसे :
भले ते करितु भवछेदु चोखाळतु असे : तुटतील मोहोपासें ॥ ३ ॥
वडिल बाळु चोखचि मैळ होये :
नागदेवो म्हणे अवनुतरावो : चक्रसामीपसाये ॥ ४ ॥

---

४० :

जेवि–जैसे ।
सपण–सपना ।
मनोव्रिति–मनोवृत्ति ।
सांडुनि–छोड़कर ।
भरांति–भ्रांति ।
दीसे–दीखे-दीखाई देता है ।
केवी–कैसे ।
जेनेविन–जेणेविण-जिसके बिना ।
मोकले–मोकळे-छूटे ।
जेथें–जहाँ ।
मानु–मान-अहंकार ।
जिनिला–जिंकिला-जीता ।
चोखाळेतु–चलते हैं ।
मैळ–मेल-मीलन ।
होये–होता है ।
पसाये–प्रसाद से ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४१ ॥

॥ राग नट्ु ॥

इंद्रियां लोभ न पवनी : जैसो असे तैसो साहाजचि करमु भिन्न :
बुझि योजु साहाजें सतगुरुउपदेशें : जेवि होये प्रक्रिती विलीन ॥१॥धृ॥
सांडी ज्ञानता करण : कलियो पवन :
निळारंभीं निरंतर : परनाथाचे भावी चरन ॥ छ् ॥
जागा कीयो प्रभु बुझों रे : नाठी जायी निद्रा सपन :
निजानंदी मन समूळ लयि गयो : बिसरियो कळा अभिमान ॥ २ ॥
पुन्य पाप बेनी लयि गयो : तुटिया भवकेरो पास :
निश्वाळूचिया परी राहियौ बो : माया जयिबो निराशा ॥ ३ ॥
जेंहींको द्रिष्टी बेधु संचरे : सरुप कहे कवण :
नागदेवो म्हणे परावरान : पर चक्रसामी पातु ग्रिवाणा ॥ ४ ॥

---

४१ :

साहाजचि–सहजचि-सहज ही ।
जेवि–जिससे ।
प्रक्रिती–प्रकृति ।
जागा–जागृत ।
निजानंदी–निजानंद में-आत्मिक सुख में ।
नाठी जायी–नष्ट होती है ।
लयि गयो–लय हो गया ।
भवकेरो–जगत का ।
पास–पाश-बंधन ।
जेहीं को–जिसकी ।
कवण -कौन ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४२ ॥

विषयपसारे मनु करायी : गायी थावों ने दायी :
मयनामय नीरांळी न पलायी : बैरीचि तो बंधायी ॥ १ ॥ धृ ॥
आले जाळे वचन विचाळे : सासु न बोले कोयी :
शुद्ध स्वरुप आपन्न होयी : सो धीरुं पंथु धरो रे भायी ॥ छ् ॥
लोलालोली ललीतविलासी : किछु न जाने सो जोयी :
जाहां जाहां चित्तु वाडदुडी जायी : ताहां ताहां पुटो न धरायी ॥ २ ॥
कोयी रे कोयी ना दे बिरला : बहुतामाजी सिद्धि न लायी :
कुलटां भावीं झाकि न जायी : ताहां सिद्धि न हो रे भायी ॥ ३ ॥
किछु न करायी सबहि चरायी : सो अचंल क्रमु करायी :
श्रीचक्रसामीचरणप्रसादें : नागार्जन कहे फुकरायी ॥ ४ ॥

---

४२ :

नीरांळी–निराली-अलग ।
विचाळे–विचारे-पूछता है ।
आपण–आपण-स्वयम् ।
धीरुं–धीर-गंभीर ।
धरो–धारण करो ।
क्रमु–क्रम ।
लोलालोली–आराम पसंद ।
किछु–कुछ भी ।
चित्तु-चित्त-मन ।
बहुतामाजी–बहुतों में ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४३ ॥

सामी हमापर लोभ करे : पुनपुना हम काज़े बा रे :
त्येका कह्या करे हो जोयी : त्ये काजे भवसिंध निवारे ॥ १ ॥ धृ ॥
साधो हो तुम्हे साधो हो : ग्यान खडगधार चलायी :
इंद्रियमन ये जिनि घालिबो : लोहा का चना चाबे कोयी ॥ छ् ॥
पंचही पंचायन तुम्हें आप हो मान्या : ते जायी और ठायीं पैठा :
उदारपणे सकळ हो बेचु दीन्हो : परधनु खायि और ठायीं न्हौठा ॥२॥
वसतो नगरपुर बास करिबो : बेनी शून्य ताहा रहिबो :
भिखिया शबदे थोडौ बहुत होयिबो : ताहा सक्रित मन थिर करिबो ॥ ३ ॥
सामी शासने सेवक करेति : मांट झाडि सोडी सोडी पुन गया :
चक्रसामीपसाये : बोलति नागार्जुन योगी हो :
तेंही संस्रितीकंद छेदी : सामराज्य पाया ॥ ४ ॥

---

४३ :

सामी–स्वामी ।
हमापर–हमपर ।
पुनपुना–पुनःपुनः ।
काजे–कार्य के लिए ।
त्येका-कह्या-उसका कहा ।
जिनि घालिबो–मत डालो ।
ठायीं-स्थानों में ।
उदारपणे–उदारतापूर्वक ।
चाबे–चबाये ।
थिर–स्थिर ।
संस्रिती–संसृति-सृष्टि ।
सामराज्य–सामरस्य-मुक्ति ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४४ ॥

सामी पुता रे कथन लागा : शासन नेटुन सोडिबो :
जीव न ताहां मन थिर करिबो : माये नीडा न जायिबो ॥ १ ॥ धृ ॥
धीरौ हो तुम्हे धीरौ हो : सतगुरू वचन साचो :
नवमाहे तुम्हें जा बीजें केले : जायि भागा : मोहे तुरे फंदे नाचो ॥छ्॥
ते गुपित करी तुम्हां पायि घाले : इंद्रिये परिवारुनि न बुझाया :
उदार करी सकळही बेच दीधो : परधन खायि और कायीं लुकाया ॥२॥
त्ये कामनु तुम्हें लोभ न धरे हो : निष्टुर कायी न बुझाया :
थोडौ घणौ तुम रे भोघ चढावे : भुख लागलयां मारी खाया ॥ ३ ॥
सरवहीं द्रिश्य साडि करे हो : एक देश एक देह सामीकाजें देयिजे :
चक्रसामी पसाये बोलति नागार्जुन योगी हो :
पाछें काहे हो पेत्ये उचाहिजे ॥ ४ ॥

---

४४ :

सामी पुता–स्वामी पुत्र ।
सोडिबो–छोड़ो ।
नीडा–घोसला ।
गुपित–गुह्य बात ।
थोडौ–थोडा ।
घणौ–बहुत ।
भोघ–भोग ।
सामी काजें–स्वामी-कार्य के हेतु ।
दीधो–दे दिया ।
लुकाया–छिपाया ।
लगलयाँ–लगने पर ।
सरवहीं–सारे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४५ ॥

॥ राग कनडा ॥

आदिनाथ उल्लेख माया स्रिष्टि रचे हो : अपण जीवे नो लागी :
जाहां ताहां संसरणी खाल्या : मोखि भूमी निरयसरगी ॥ १ ॥ धृ ॥
त्यजो हो तुम्हे त्यजो हो : चंडाल संसरण मारग त्यजायी :
ज्यो तुम्हे करो तेने न मुचो : शुद्ध कायिसेनि होयी ॥ छ् ॥
जीवमों मीलनी करे हो : पापपुन्य रे गती :
एउं प्रसंग कायि न मानो प्रक्रिती : रजशीलमहं करोति ॥ २ ॥
तेउं प्रसंग काहां फीटे : ऐसी तीरथ चोखट न होयी :
ग्यान शुद्ध गोमती प्रायश्चित दीजे : भूतें भूत शुद्ध न होयीं ॥ ३ ॥
प्रव्रिती लायी त्येउं कराया : भवपाश न चूके हो भायी :
चक्रसामीपसायें बोलति नागार्जुन योगी हो :
इश्वरग्यान पंथी गुरू भेटायी ॥ ४ ॥

---

४५ :

संसरण मारग–सांसारिकता का मार्ग

कयिसेनि–किस प्रकार ।

भूतें-भूत से ।

प्रव्रिती–प्रवृत्ति ।

भेटायी–भेट होती है-मिलते हैं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ ४६ ॥

॥ राग कल्यान ॥

पाखा न फोडो डोहो बिंदु काढो हो : इसे हमे मुगुता कहो :
भ्रमत भ्रमत संवसारासि छेदो : जेथिचा तेंथ लया जावो ॥ १ ॥ धृ ॥
सुता जागानु ठावे : परु हा बोले थोंदुर [?] पुकारे जाये ॥ छ् ॥
अध ऊपरि जावो खावो : खटुचक्रभेदु न ल्हावो ।
क्रियेविन आपपर न बुझो : मुगुता केवि होवो ॥ २ ॥
तनु मोरो पांगरुण रे : मन पवन तेरा भाई ।
दोंमध्यीं कवनु अतूमा रे : कवणु भात खायी ॥ ३ ॥
अवराऊपरी पराभीतरी : न करावे किस केरी राती ।
सतगुरुवचने नागार्जुन म्हणे : श्रीचक्रसामीचा चरनीं रती ॥ ४ ॥

---

४६ :

मुगुता–मुक्त ।
जेथिचा–जहाँ का
खटुचक्र–षट्चक्र
भेदुन–भेदन ।
ल्हावो–लगाओ ।
पांगरूण–पांघरूण-उढ़ावन ।
आतूमा–आत्मा ।
केवि–कैसे ।
दों मध्यीं–दोनों में ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

। ४७ ॥

॥ राग भूपाळी ॥

सपतही अगड केले खोल हो : पन्नासिले नवही हुडे :
मूळस्थानीहुनि लावियेले निसान : एकचि दार उघडे ॥ १ ॥ धृ ॥
अवघड दुर्ग देखो रे भायी : परिकया न मोडे मनमथ :
ग्यानखरग गुरूणि दीधले : मस्तकी ठेविला हातु ॥ छ ॥
उपराठें सूत्र पानियां केलें हों : उपरि भरियेलें टांकें :
तळूनि अग्नि वन्हिया नेला : ब्रह्मरसू परि वारा भातुकें ॥ २ ॥
निराकार संजूति आंगी घालूनियां : सतवाचा बानला टोप :
मनपवन दोन्हीं पाखरले घोडे : पुढां चाले विवेकरूप ॥ ३ ॥
सवाय लक्ष एक्याची कोडी दाहा आंगळें दळभाडें :
तयांमाजि तीनीचि धूरा :
ऐसें जानविलें नागारजुना : शरण जावो तया श्रीचक्रधरा ॥ ४ ॥

---

४७ :

निसान–निशाण ।
उघडे–खुला ।
अवघड–कठिन ।
खरग–खड्ग ।
गुरूणि–गुरु ने ।
दीधले–दिया ।
ठेविला–रखा ।
हातु–हाथ ।
उपराठें–विपरीत, उल्टा ।
तयांमाजी–उनमें ।
जानविलें–जाणविले-ज्ञान कराया ।
जावो–जाओ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४८ ॥

॥ राग गौडी ॥

छपन कोडी वसंधरा हो भायी : जाहां जावो ताहांताहांचि वासु :
अपपरु ऐसें दोन्हीं न जानो : नाहीं दीठा परंदेश ॥ १ ॥ धृ ॥
तत्त्व बुझौनि जानों ना सुखदुःख : कामक्रोध माया मछर :
त्यजूनि आम्हीं असों : परम सुर ॥ छ् ॥
दाहां दिशा आम्हां पांगरण हो भायी : निरालंबु हमारा स्थान :
निराशमंडळीं भिक्ष्या करो : मनसंतोष होये आपण ॥ २ ॥
गुरुउपदेश निरमळ होयी : योगी बोलिजे ब्रह्मग्यानी :
स्वभाव विसरले हो भायी : तेहीं टाकिले पर निर्बाणीं ॥ ३ ।
जे महानुभाव [ब्रह्म] विद योगी : तेथें पारखी मुनिजन :
नागदेवसामी शरण रीगतां : तुटे भवपतन ॥ ४ ॥

---

४८ :

छपन–छपन्न ।
वासु–वास-निवास ।
ताहांताहांचि–वहाँ-वहाँ ।
अपपरू–आपपर ।
दोन्हीं–दोनो ।
दीठा–देखा-दिखाई दिया ।
परंदेश–परब्रह्म का देश ।
मायामछर–मायामोह ।
दाहां–दहा-दस ।
पांगरण–पांघरूण-परिवेश वस्त्र ।
बोलिजे–बोले-कहे ।
विसरले–भूल गए ।
विद योगी–ब्रह्मविद योगी ।
पारखी–पारख अथवा परीक्षा करते हैं ।
रीगता–आनेसे ।
तुटे–टूटे ।
भवपतन–भवपाश ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ४९ ॥

नगरमध्ये पैसो : आवडत खडुरस :
आकाशा आम्हांरा धवळार : नवखंड आम्हांरा देश ॥ १ ॥ धृ ॥
तुम्हे सटो सटो डंभ करण नावे : जेतां डंभ करे तेता बंधन पावे :
चिथडा फाटातुटा पेनो हो उपरि नावे :
चोर ये रहणी चलंति ते जंगलमध्ये सोवे ॥ छ् ॥
सटि वा झुटा बोलिबा मीठा : आशा मनसा दुयि धांधा :
कामक्रोध जिसे निभावे नाही : तिसे काळ फाड फाड खाता ॥ २ ॥
ऐसें तुम्हें बैरागी हो : आचार खरगधार चलायी :
अहंकार डंभ जिसे निभावे नाही : ते परसिद्ध कैसेनि पायी ॥ ३ ॥
कहे रे नागार्जुन राजा हमें : सोडियो मानु अभिमानु किसकी हमें करें निंदा :
सुटे पुहपमये सेजा : हे जिसे भवंति तिसे काळ : फाड फाड खादा ॥ ४ ॥

---

४९ :

मध्ये–में ।
आवडत–आवडणें-पसंद करना ।
धवळार–धवलार-प्रासाद ।
तेता–उतना ।
पेनो–पहिनो ।
दुयि–दो ।
निभावे–दूर करना ।
सुटे–छूटे ।
पुहपमये–पुष्प के मध्य ।
काळ–काल रूपी भय ।
पैसो–पैस-स्थल-प्रसार ।
खडुरस–षड्रस
जेतां–जितना ।
डंभ–दंभ ।
साटि–सत्य ।
धांधा–धंधा ।
तिसे–उसको ।
सोडियो–छोड़ो ।
सेजा–शय्या ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५० ॥

भूमीशयन जया पालकु हो : निज भूज लंका [?] उसीसें :
गगन चांदोबा : शयन करीत संतोषे ॥ १ ॥ धृ ॥
सुरगणी मंडित निद्रा करी : विषयविरहीत :
प्रक्रितिचां गुण सांडिला योगी : अचराचरी सदा मुगुत ॥ छ् ॥
जाहां जाहां जाये ताहां तहां अम्रितवाणी हो : अम्रित गावोगांवी :
भिक्षा मागी आप महासुखे विचरे हो योगी : नाही आऊष्य क्षयो भवी ॥२॥
दाहा दिशा मोकळिया : आनिक बारा वाटा :
एतां जातां कव्हणी न पाचारी : बापु वयिराग्यनिष्टा ॥ ३ ॥
दाहां दिशा विजीती हो : पंवनाचा चमरीं :
श्रीचक्रसामीपसायें नागारजुनें : केली हे परी ॥ ४ ॥

---

५० :

चांदोबा–चंद्रमा-चाँदनी ।
प्रक्रितिचां–प्रकृति का ।
सांडिला–छोड़ दिया ।
मुगुत–मुक्त ।
विचरे–विचरण करता है ।
आऊष्य–आयुष्य-जीवन ।
मोकळिया–मुक्त ।
आनिक–आणिक-और ।
वाटा–राह ।
पाचारी–पाचारण करना-बुलाना ।
वयिराग्यनिष्टा–वैराग्यनिष्ठा ।
विजीती–विजय संपादन किया ।
केली हे परी–इस प्रकार किया ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५१ ॥

ब्रह्मगिरिगंगे : करुं स्नान :
सकळां भूतां : देवों अभयदान ॥ १ ॥ धृ ॥
आम्ही भले हो ब्राह्मण : करुं निज धरम :
गुरूपसायें : फिटी गेला भरमु ॥ छ् ॥
विकल्प विटाळु : किछु न साहो :
साहजें स्वभावीं : निरालंबी राहो ॥ २ ॥
सुमन हवावो : विधि न भावो :
निर्पेक्ष निराशा : केहीं न जावो ॥ ३ ॥
नागदेव कहंति : अनुतर देवो :
चक्रसामीपसायें : निरंतर चाहो ॥ ४ ॥

---

५१ :

करूं–करेंगे-करते हैं ।
सकळां–सबको ।
देवो–देंगे ।
गुरुपसायें–गुरुकृपा से-गुरु प्रसाद के कारण ।
केहीं–कहीं भी ।
निर्पेक्ष–निरपेक्ष-अपेक्षाशून्य ।
कहंति–कहते हैं ।
फिटी गेला–दूर हुआ ।
विटाळु–अस्पृश्य बस्तु ।
किछु–कुछ ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५२ ॥

कुकरी सुमरो हौ गयी : मासुरी ये चूची देयी :
मासुरी मासा उपवास पैठी : सोखवने गिळिगिळी खायी ॥ १ ॥ धृ ॥
कत्तुचें वो मेवो गों वेंगो : भरडक भोंबे भांबरि भोंबे :
उभी बाहे कर कुकरी पुकारे : लोहा का चणा कोयि चाबे ॥ छ् ॥
सतिगरू मारग कथितां लोयी : चिदानंदसु आयी :
सुष्ट सिहाने भजियो घांसी : तें आपे आपु धायी ॥ २ ॥
सतिगरू मारग कथितां लोयी : चिदानंदसु आयी :
नीरसमुहीं बैसन पशुवा : भव जळीं बुड बुड जायी ॥ ३ ॥
सतिगरू मारग कथितां लोयी : चिदानंदसु आयी :
आखीं न देखे नागदेवासामी : तैं कुकरी कहुं सरी जायी ॥ ४ ॥

---

५२ :

कुकरी–कुत्तिया ।
सुमरो–बेसुमार-बेकाबू ।
चूची–चोंच ।
पैठी-पैठ–परिपाठ-
वेंगा–वेंग-व्यंग्य ।
भरडक–भरड-डोरी बाँधकर खींचना ।
भोंबे–भोंबा-होवा (डरावनी वस्तु ।)
मासुरी–मासोळी-मछली ।
नीरसमुहीं बैसन पशुवा–पशु बनकर पानी में बैठा है ।
(बह जाएगा ।)
चाबे–चबाये ।
लोयी–लोग ।
भवजळीं–भवसागर में ।
आखीं–आँखों से ।
तें–तो ।
कहुं–कैसे ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५३ ॥

धूळिधूसरा दुशा अति निराशा : खंड मंडळ ठिया वनवासा :
सुखदु:ख अभ्यांतर सूचन काया : रोगिराजें ह्हौ नाम ऐसा ॥ १ ॥ धृ ॥
सुनो हो पुरुखा भावदग्ध वळसा : दुखपात्र न भावे हो विखया रसा :
कंठीं फुटे मग कायि उरे हो पंडितो : गळी गुंता अडे हो मासा ॥ छ् ॥
जाती तजीव भिन्न मधुरसु वयुना : पंडितमुख पंथसु जाना :
सबही गुण निव्रिती राजा : मनी रमंति एहीं हो खुणा ॥ २ ॥
लायी भगतीकी माला : घट उजाळा : अनुष्टो बिरामकी कला :
मुगुती का भर भगती सवद हो पूकारे : नेत्रवाट सूशीतला ॥ ३ ॥
संपूरण डंसचिहि न काया : हमेंचि पाया : मूढ दुरजन रूप गवाया :
नागार्जुन का पुता शिरीमुखबचनीं : तोडि धांधा दूरि किया ॥ ४ ॥

---

५३ :

धूलिधूसरा–धूलिधूसरित ।
ठिया–ठायी-स्थान में ।
दुशा–दशा-स्थिति ।
वळसा–परिक्रमा ।
विखया–विषय-वासना ।
कायि–क्या-कितना ।
उरे–उरणे-बाकी रहना ।
गुंता–गुंतणे-फँसना ।
अडे–अडणे-अटकना ।
धांधा–व्यवहार ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५४ ॥

॥ राग गौडी ॥

खडखडीत गात्र निरमळ नेत्र : निरबाण का भसमारा :
जिवंतांचि रे बाबा हमें मरणसुख पाया : निराशपंथ हमारा ॥ १ ॥ धृ ॥
कवण गोत्र कवण मित्र हो बाबा : कवण गुरू कवण चेला :
कवण शिखा कवण सूत्र हो भायी : कवण सुखी कवण भूला ॥ छ् ॥
ग्यान का योगुत्रिकुट मुखा : ग्यान भगति बैराग्यु सुखा :
प्रमाणपुरुखें कथन किया हो : न जानंति बिग्यानभाखा ॥ २ ॥
बयिरग्य कडासन आचारकंथा : बडा बिचारु हमारा संगी :
ग्यान बिग्यान दुयि न बुझंति पूता : सामी हमारा योगी ॥ ३ ॥
दिगं अपरपर हमें वसों परदेशा : ब्रह्मविद्या हमारी भाखा :
नागार्जुन का पुता शिरिमुखबचनी : अनुभवं बदंति हो ऐसा ॥ ४ ॥
॥ इति श्रीदामोदरपंडितविरचित चौपदी प्रकरन आचारनिरुपन समाप्त ॥

---

५४ :

खडखडीत–धष्टपुष्ट ।
जिवंतांचि–जीते जी ।
हमें–हमने-हमको ।
कवण–कौन ।
सूत्र–यज्ञोपवीत ।
वैराग्यु–विरक्ति ।
जिवंतांचि–जीवित रहते हुए ।
बयिरग्य–वैराग्य-विरक्ति ।
सामी–स्वामी-गुरु ।
भाखा–भाषा ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५५ ॥

भव धरावरी प्रगुणें रे जेंवि : दैव प्रक्रीती देह केतना :
कीछ न जानो किसु ना आतो : उत्तर बुझो संकेती ॥ १ ॥ धृ ॥
बुझो हो बुझो हो बुझो : अचरिजो मोरो उपदेशु :
नवपदीं नवपद बैसो बाहुडी आयिसो : दशवां करों परवेश ॥ छ् ॥
अवरु अंधा बंधा : परु रे मूका : पशुवा तुं बध मूका :
मुकवचनीं सुनि रहीयो नीका : न तरे अंध परलोका ॥ २ ॥
रूप रूपा अतीत : अनुभूति न लगे न धरे निदा :
ळुलो प्रक्रिती आनी भराती : जयालागि पाती :
काया करों कातीं : तयबीजीं होए चूती ॥ ३ ॥
तेजौं बीनीलो सतगुरु उपदेशे : तुटि जाती तोन्हीं पासे :
कहंती नागार्जुन योगीराजे : धिरो रे मोरी भासे ॥ ४ ॥

---

५५ :

जेंबि–जैसे
केतना–कितना ।
कीछ–कछु-कुछ ।
बाहुडी–बाहर ।
मूका–मूक-गूंगा ।
ळुलो–रूळो-कायम हो ।
बीनीलो-बुना है ।
पासे–पाश ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५६ ॥

आनादिचे दोनि पक्ष हो भाइ : एकु दिसे भंगे। एकु न दिसे न भंगे :
दोहींचा निरबेचु द्विध भावीं : चैतन्य मूसावलें मूसे :
ऐसे केलें तें गुंतौनि राहिले जीवीं ॥ १ ॥ धृ ॥
अविद्या विभागें : जीव एकू जोगे : वेधा वेवधानी भाखा :
आपुले पुन अहि लोघे पुता : पाठीं कवनासि लाज : कवनासि शंका ॥ छ् ॥
मायावंतु देह सकळ दळही दळवाडें जाले : पाटुनीं प्रयागुरु उगवींली :
पीठें जिव्हींची नेत्रीं उसासलीं : ते कव्हणे एकें बंधें जितलीं ॥ २ ॥
त्रिकुट जींतौनियां : चक्रपीठ केलें : सत्यवंती तीयें लाहुनि उपदेशु :
तीहीं उल्हासौनि जीवनिं मीलों : तो दशगिरी हमारा देश ॥ ३ ।
वाचा नमीले बुझे : न व्हावे हो हमारा आदिवासु :
नागार्जुनप्रसादें ईश्वरबचनी : म्हणौनि पाया उपदेश ॥ ५ ॥

---

५६ :

दोनि- दोनों।
भंगे–टूटा हुआ।
आपुले–अपना।
गुंतौनि–अटका हुआ।
पाठीं–पीछे।
शंका–संदेह। अविश्वास।
दळवाडें–समुदाय।
लाहुनि–लाधुनि-प्राप्त होकर।
व्हावे–होणे-होना।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५७ ॥

मृगनाळीद्वारे सवृतपंथें : गुभ भीड शोधुकर प्रवेशे लहीरा :
पुढां दोनि पक्ष जाले एक पंथ ठेले : एकें उचें पथें विचरों त्या नगरा ॥१॥धृ॥
ऐसा अवघड पंथु बुझता न बुझी हो लोइ : जैं क्रिया करीती अदीगुरु राजे :
सिद्धांतीचें बींज आपुलीया आंगवना : साबदी सामर्थ्य मुनीराजा साजे ॥छ्॥
भीतरी भीतरागे न भी येंत्र : करासम विखम विपरीत तोंडीं धुळीं
सगुणनिरगुण बाबा एकें नाळें : कंचपुरि जीव कीचुं कउं जीव्हाळी ॥ २ ॥
समरत समरत मीलनि मिलावो : अव्यवीव्यगतीं आपनयातें नेईं त्या पंथा :
याही होऊनि जीविता जीवनचि कैचें : जानताचि पुरुखू भोगी व्यथा ॥ ३ ॥
स्फटिकामध्ये हीरा बेधुकर गया : उजीयेडा लोपी एली भ्रिंगकळा :
नागार्जुनप्रसादें बुझलों हो ऐसें : म्हणौनि वोळखीला परमळा ॥ ४ ॥

---

५७ :

समरत–समर्थ ।
पुढां–पुढ़े-आगे ।
ठेले–स्थिर हुआ ।
अवघड–कठिन ।
लोइ–लोग ।
विखम–विषम ।
कैचें–कैसे ।
उजीयेडा–उजेड-प्रकाश ।
वोळखीला–ओळखिला-पहचाना ।
परमळा–परिमळ-ज्ञानरूपी सुगंध ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

॥ ५८ ॥

एकाचिए गोत्री दोनि कुळें : एक एकासी आगळे :
दोहींसी मेळु : एकेंसीं खेळु : परि होने क्रण्हें [?] रतें वेगळें ॥ १ ॥ धृ ॥
अवघड कुवडे आडे : सकळ सिद्धांता नुगवे कहीं :
संतगुरु आदिनाथ बचनीं बाचा रे : बिरला बुझंति ते जोइ ॥ छ् ॥
शरीरसंबधेविन पाठींपोटीं : मागांपुढां कुळें दोनी :
पुरुख ना अस्तुरी नपुंसकुलिंग : एकंदर होऊनि असती तीन्हीं ॥ २ ॥
एक कुळ कांताचेया आवडी : नांदे थोर सुखे :
एरु वयितागे वीतरागी : बुडी देऊनि जीवित्वासि मुके ॥ ३ ॥
एक धाम त्रीधा आश्रम त्रिधा सम : एक उने एकें गुणें :
हे चक्रसामी जानवी तैचि जानिजे : ऐसे नागार्जुन म्हणे ॥ ४ ॥

---

५८ :

एकाचिए–एकके ही ।
कुळे–कुळ-कुल-खानदान ।
आगळे–विशेषता से युक्त ।
मेळु–मेल ।
खेलु–खेल-क्रीडा ।
कुवडे–कोडे-पहेली ।
अस्तुरी–स्त्री ।
नुगवे–समझमें न आये ।
कहीं–काही-कुछ ।
मागांपुढां–मागेपुढें-आगेपीछे ।
दोनी–दोनों ।
वयितागे–वैतागे-त्रस्त होता है ।
मुके–वंचित होता है ।
जानवी–जाणवी-जाने-समझे ।
उने–उणे-न्यून युक्त ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ५९ ॥

एक ब्रिछ तीनि खांदीया रे बाबा : डाहाळिया बोलो च्यारि पांच :
दोमि पत्रें झिळिमिळिते : पुढें एक पूहुप बानले :
आग्री जोडफळ ह्में देखो हो साचा ॥ १ ॥ धृ ॥
ह्में पंखि बाबा कव्हनी एकी दीपीचे : आलों फळाचिया रसा :
अवघड ब्रिछ देखौनि उगेचि ठेलो : राहिलो फ़ळाचिया आशा ॥ छ् ॥
दोनि पखिये ब्रीध [?] एकेचि पोटीचे : एक शुद्ध शुभ्र एक हारा :
दोन्ही उत्पवले : ब्रछीं झेपावले : एक पत्रीं राहिला :
एक पुहुपीं जे तो मधुर चारा ॥ २ ॥
एक जोडफळ वेगडली गोडीं : अर्धफळीं बाबा द्विध परिवडी :
उरलीये विभागी तीजा परी बोलों : अवघड तेथिची कुंसरि फुडी ॥ ३ ॥
ऐसा ब्रीछु देखौनि ह्में जीवें : विगुंतलो : और नाठवे बाबा काहीं :
चक्रसामीपसायें कहंति नागार्जुन : इश्वर बुझलो एहीचि देहीं ॥ ४ ॥

---

५९ :

ब्रिछ–वृक्ष ।
खांदीया–खांद-पेड़ की शाखा ।
डाहळियाँ–डालियाँ ।
धांधा–धंधा–व्यवसाय ।
पुहुप–पुष्प ।
बानले–बनले-बन गया ।
उगेचि–उगाच-योंही ।
ठेलो–ठहरे ।
वेगडली–वेगळाली-अलग अलग ।
उरलीये–बाकी जो रहा ।
गोडी–मिठास ।
कुंसरि–कुसरी-कुशल ।
फुडी–आगे ।
नाठवे–न आठवे-स्मरण नहीं ।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

॥ ६० ॥

नवही नाथ : सोळाही सिद्ध : देखत देखतां काळें खादा :
गुरुमुखबचने थिर नव्हती रे अंधा : न गाया तुम्हांरा धांधा ॥ १ ॥ धृ ॥
बुझो हो पुरुखा : बुझो हो जोयी : मनवा चंचल करींवा भायी :
जिन्हें कारनें तुम्हीं इक रोकाती [?] : ते आनी आनी भ्रांती जाइ ॥छ्॥
मन कसोटी पवन लंगोटी : सुतकी [?] करो तुम्हें आधारी भायी :
पंचही तत्त्वे मेला : वो हो जोयी : तो गोरक्षु कहिजे भला होयी ॥ २ ॥
चाऱ्ही जुगें आम्ही सुते होतो : न गई हमारी भ्रांती :
गुरु को बचन धरे हो चित्ती : तो न जाने दीन की राती ॥ ३ ॥
आसनी बैसो मन थीर करो : मारो सकळही भ्रांती :
नागार्जुनप्रसादें पंडीत कहंती : तुज शरण रिगालों भटसिद्धातीं ॥ ४ ॥
। इति श्रीदामोदरपंडीतुविरचित चौपदी प्रकरण उद्धरण नीरूपण समाप्ता: ।
॥ एवं चौपदी प्रकरण समाप्त : ॥
॥ इति श्रीमछदेशोपनाम अगदत्त श्रीगोविंदराजमुनी हस्त अक्षरा नेसराजवाबान लीखीते ॥ चौपद्या हस्त आक्षर ॥

---

६० :

काळें–कालें-काल ने ।
खादा–खा लिया ।
बुझो–समझो ।
जोयी–योगी ।
करींवा–किया ।
आनी आनी–अधिक ।
आधारी–आधार-संबल ।
दीन–दिन ।
थीर–स्थिर ।
भट–भटोबास-गुरु ।
रिगालो–रिगणे-प्रवेश करना ।

• • •

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

चौपदियों की आद्यचरण सूची

	चौपदी क्रमांक
अनादिची देवी माया भूतें संभवली	३५
अनादिची दोन्हीं एकीचि पाइं	२३
अभिनव चोज देखिले हो बापा	२५
अहो स्वयंभ नित्य असे कवण	१०
अंग मोडी पवन झाडी	१६
आदि अंती एक असे	२१
आदिनाथ उल्लेख माया स्रिष्टि रचे हो	४५
आदिनाथरूप न जानंति कोयी	१२
आनादिचे दोनि पक्ष हो भाइ	५६
आप ना तेज वायु ना आकाश	६
आरे कवण उपजविला कवणे लया नेला	५
इतुलया दीसां आम्ही जानितले	३४
इंद्रियां लोभ न पवनी	४१
एक आंतु बाहीरी एति जाति	२८
एक जागा एक सुता रे भया	३०
एक व्रीछ तीनि खांदीया रे बाबा	५९
एका चतु:प्रकारी नाशु नाही	२२
एकाचिए गोत्री दोनि कुळें	५८
एकि मायी और बहुत धाया	३७
एकु अंधा एकु पंगा रे भायी	२९
एकोचि जीवां या दोघदोघा एकत्र असने	३१
कवन हो करिता कवण हो करविता	२
कवण हो बंधक : कवन हो मोचक	४
कवण हो बंधा कवण हो मुगता	३
कुकरी सुमरो हो गयी	५२
खडखडीत गात्र निरमळ नेत्र	५४
गयनी उतपत्ति गयनी लो रे	२६
छपन कोडी वसंधरा हो भायी	४८
जानें तानें करणें	१५

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

	चौपदी क्रमांक
जैंसे सागरीं तरंग होती	२०
तनु मनु पवना जया अधीन	१३
दीसे ते निरुवाण कैंसें बुझावे हो पांड्या	१९
धूळिधूसरा दुशा अति निराशा	५३
नगरमध्ये पैसो	४९
नवनाथ कहे सो नाथपंथी	१८
नवही नाथ सोळाही सिद्ध	६०
नथिली उतपति स्थिति जोगी	४०
नाद नाहीं बिंदु नाहीं कळा नाहीं ज्योति नाहीं	७
पढो हो पंडित गुणो हो शास्त्र	१
प्रथम रचलें कवणे गती	८
प्रसवली सुखें निमिषें एके	३२
पाखा न फोडो डोहो बिंदु काढो हो	४६
पांचांचे केले अप मानंति	१७
बुढा म्हातारी थेरी रे	३६
ब्रह्मगिरिगंगे करूं स्नान	५१
भगवंतासंवें विकरली	३३
भव धरावरी प्रगुणें रे जेवि	५५
भीडी भीडी कथन जोयी	३८
भूमीशयन जया पालकु हो	५०
मुकेनि सपन दीठो रे	३९
मूळ सूत्र पंथें त्रिकुट चाळिया	९
मृगनाळीद्वारे सवृतपंथें	५७
लोहो जैंसे अळिका तैंसेंचि कंनक	१४
विषयपसारे मनु करायी	४२
सपतही अगड केले खोल हो	४७
सर्वें साहंकार कहंति जोयी	११
सामी पुता रे कथन लागा	४४
सामो हमापर लोभ करे	४३
सुता परिसैं हैं असे	२४
स्वयंभु पदा ग्यान कैंसी व्यवस्था	२७

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

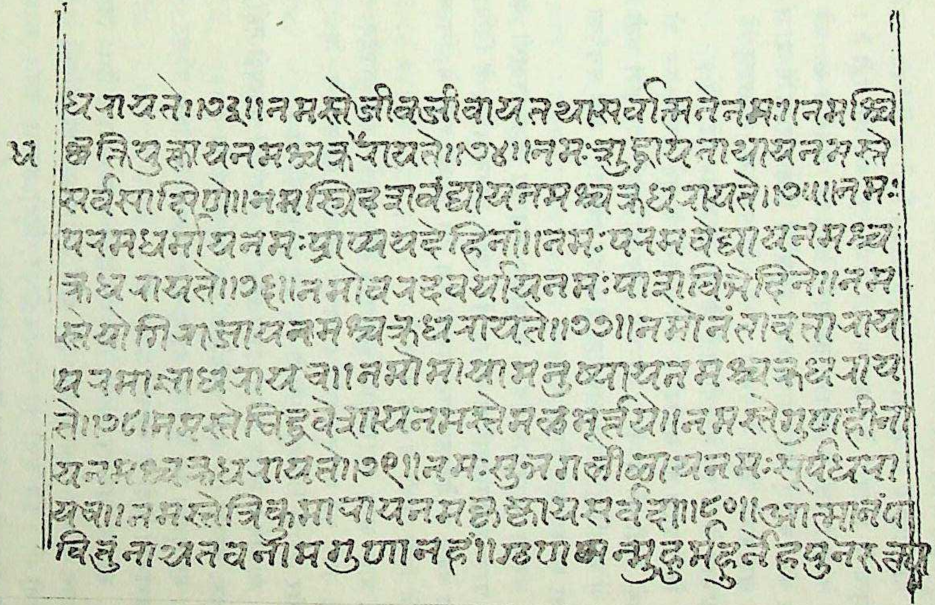

श्रीमान् डॉ. रा. चिं. ढेरे महोदय के निजी हस्तलेख संग्रहालय से प्राप्त 'सकळी' लिपि में लिखित प्राचीन हस्तलेख का एक/पृष्ठ। नागरी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

उपसंहार

आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि आचार्य दामोदर पण्डित के जीवन-चरित्र, कार्य एवम् काव्य रचना का अध्ययन करने के अनंतर हम अपने कुछ निष्कर्ष इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं।

१. महाराष्ट्र में प्राप्त और मराठी-प्रभावित हिंदी में लिखित आदिकालीन हिंदी साहित्य के इतिहास से संबद्ध सामग्री अभी तक अलक्षित रही है।

२. तेरहवीं शती से लेकर उन्नीसवीं शतीतक लगभग छः सौ वर्षों में खड़ीबोली की रचनाएँ हिंदी भाषा-भाषी प्रदेशों में विशेष मात्रा में प्राप्त नहीं है।

३. खड़ीबोली हिंदी में रचना करने की परम्परा महाराष्ट्र में दक्खिनी हिंदी के प्रभाव के कारण तेरहवीं शती के पूर्व ही कायम हुई थी।

४. हिंदी प्रदेश की खड़ीबोली अथवा उर्दू के पूर्व कम-से-कम दो सौ वर्षों की दक्खिनी हिंदी की अपनी परम्परा है। ईसाकी दसवीं-ग्यारहवीं शती से लेकर महाराष्ट्र में नाथसिद्धों का संचार रहा है। इन साधुओं ने यहाँ प्रचलित दक्खिनी हिंदी भाषा का स्वीकार किया था।

५. मराठी महानुभाव पंथ के संस्थापक महात्मा चक्रधरस्वामी अपने पूर्व जीवन में प्रायः नाथसांप्रदायिक व्यक्ति थे। उनके जीवन चरित्र के विविध लीला प्रसंगों का वर्णन करनेवाला आद्य मराठी गद्य ग्रंथ तेरहवीं शती में लिखा गया। इस ग्रंथ में हिंदी भाषा के अंश प्राप्त हैं।

६. प्रायः आद्य महाराष्ट्रीय हिंदी कवि होने का श्रेय संत नामदेव को दिया जाता है। उनसे पूर्व महानुभावपंथीय आचार्य दामोदर पण्डित ने हिंदी मिश्रित मराठी और मराठी मिश्रित हिंदी में रचनाएँ प्रस्तुत की थीं।

७. आचार्य दामोदर पण्डित द्वारा विरचित चौपदियाँ चतुष्पदी नहीं, चर्यापद हैं। संभवतः चौपदी यह शब्द 'चर्यापद' का मराठी पर्याय है।

८. महानुभाव पंथ में दीक्षा ग्रहण कर आचार्य दामोदर पण्डित ने नाथ-मत के खण्डनार्थ हिंदी में रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

९. आचार्य दामोदर पण्डित की चौपदियाँ काव्यभाषा में हैं। परंतु उनका उद्देश्य केवल कविता-रचना करना नहीं था। उन्हें नाथपंथीय योगियों से दार्शनिक चर्चा करनी थी। इस चर्चा का माध्यम केवल हिंदी अथवा केवल मराठी नहीं रहा। दो भाषाओं का मिला-जुला रूप रहा।

१०. इस प्रकार की हिंदी मिश्रित मराठी तथा मराठी मिश्रित हिंदी में रचना करनेवाले आचार्य दामोदर पण्डित आद्य महाराष्ट्रीय कवि हैं। और नाथमत के आद्य खण्डनकार हैं।

११. आदिकालीन हिंदी कवि के रूप में आचार्य दामोदर पण्डित को गौरव-पूर्वक प्रतिष्ठित किया जाना आवश्यक है।

✦ ✦ ✦

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

संदर्भ - ग्रंथ - सूची

अक्कोळे सुभाषचन्द्र : मेघराज विरचित 'जसोधर दास'
जीवराज जैन ग्रंथमाला, सोलापूर, १९५९

बडथ्वाल, पितांबरजी : गोरखबानी,
हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग, १९४२

भावे वि. ल. : महाराष्ट्र सारस्वत,
पॉप्युलर प्रकाशन, बम्बई, १९६३

दाण्डेकर शंकर वामन : वारकरी सम्प्रदायाचा इतिहास,
दाण्डेकर धार्मिक वाङ्मय प्रकाशन मण्डल, पूना, १९५७

देशपांडे भि. गो. : मराठी का भक्ति-साहित्य,
चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, १९५९

देशपांडे वा. ना. : स्मृति-स्थळ,
व्हीनस प्रकाशन, पूना, १९६०

देशपांडे यशवंत खुशाल : महानुभावीय मराठी वाङमय,
व्हीनस प्रकाशन, पूना, १९६०

ढेरे रा. चिं. : लीळा चरित्रातील सिद्ध आणि नाथ,
जोशी–लोखंडे प्रकाशन, पूना, १९७०

ढेरे रा. चिं. : गुरु गोरक्षनाथ चरित्र आणि परंपरा,
वोरा अॅण्ड कंपनी पब्लिशर्स, बम्बई, १९५९

ढेरे रा. चिं. : नामदेवाची समाधि
(श्री नामदेव दर्शन–नामदेव समाजोन्नति परिषद)

ढेरे रा. चिं. और अशोक कामत : नामदेव एक विजययात्रा,
विश्वकर्मा साहित्यालय, पूना, १९७०

द्विवेदी हजारीप्रसाद : हिंदी साहित्य की भूमिका,
हिंदी ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई, १९५९

दिवाकर कृ. गं. : भोसला राजदरबार के हिंदी कवि,
काशी-नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, १९६८

इनामदार हेमंत : संत नामदेव,
केसरी प्रकाशन, पूना, १९७०

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जोगळेकर न. चि. : हिंदी एवं मराठी के वष्णव साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन,
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, १९६८
जोशी ना. ग. : मराठी छंदोरचना विकार,
मौज प्रकाशन, बम्बई, १९६४
जोशी वें. – ढेरे रा. चि. आणि गाडगीळ ब. : संपादक संस्कृति सुगंध,
जोशी–लोखंडे प्रकाशन, पूना, १९७०
कामत अशोक प्रभाकर : महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य,
जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, १९७६
कोलते वि. भि. : दामोदर पण्डित विरचित वछाहरण,
अरुण प्रकाशन, मलकापूर, १९५३
कोलते वि. भि. : मराठी संतों का सामाजिक कार्य,
हिंदी ग्रंथ रत्नाकर, बम्बई, १९५४
कोलते वि. भि. : श्री चक्रधरचरित्र,
अरुण प्रकाशन, मलकापूर. १९५२
माचवे प्रभाकर : हिंदी और मराठी का निर्गुण काव्य,
व. दा. कुलकर्णी : महानुभाव, मे–जून १९६६,
(दामोदर पण्डितांच्या चौपद्यांतील तत्वज्ञानाची पूर्वपीठिका)
महाराष्ट्र शासन : नामदेव दर्शन,
नामदेव समाजोन्नति परिषद, १९७०
महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका : वर्ष २७,
१९५३, अन्वयस्थळ
महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका : वत्साहरण काही विचार,
वर्ष ३१, ऑक्टो.–डिसें. १९५७
महाराष्ट्र साहित्य पत्रिका : वत्साहरणातील काव्य–एक मूल्यमापन,
वर्ष ३२, जाने.–फेब्रु.–मार्च १९५८
मराठी संशोधन पत्रिका : वर्ष २१,
मराठी संशोधन मंडल, बम्बई, १९७४
मराठी स्वाध्याय संशोधन पत्रिका :महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य,
उस्मानिया विद्यापीठ, मार्च १९६६
मराठी स्वाध्याय संशोधन पत्रिका : दामोदर पण्डितांच्या चौपया प्रकाशन १ ले,
उस्मानिया विद्यापीठ, अंक १, १९६६
मिश्र भगीरथ और शुक्ल राम बहोरी : हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास,
हिंदी भवन, इलाहाबाद, १९५६

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

मिश्र विश्वनाथ प्रसाद : काव्यांग कौमुदी,
नन्दकिशोर एण्ड ब्रदर्स. वाराणसी, १९६६
मोकाशी पं. रा. : महाराष्ट्रातील पांच सम्प्रदाय,
प्रसाद प्रकाशन, पूना, १९५४
पांगारकर ल. रा. : मराठी वाङ्मयाचा इतिहास खण्ड १,
के. भि. ढवळे, बम्बई, १९३२
रानडे रामचन्द्र दत्तात्रय : इंडियन मिस्टिसिझम, मिस्टिसिझम इन् महाराष्ट्र,
आर्यभूषण प्रेस, पूना, १९३३
सरदार गं. बा. : संत वाङमयाची सामाजिक फलश्रुति,
महाराष्ट्र साहित्य परिषद, पूना, १९५०
सक्सेना बाबुराम : दक्खिनी हिंदी
शर्मा विनय मोहन : हिंदी को मराठी संतों की देन,
बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, १९५७
शास्त्री एस्. सुब्रह्मण्य : शाङर्गदेव विरचित द्वितीय खण्ड, संगीत रत्नाकर, ४२९३,
दि अडचार लायब्ररी अँड रिसर्च सेंटर, अडचार (मद्रास), १९५९
शुक्ल प्रयागदत्त : हिंदी साहित्य को विदर्भ की देन,
विदर्भ साहित्य सम्मेलन, नागपूर, १९६१
गोंदेकर जी. के. : मानसोल्लास भाग ३,
ओरिएन्टल इन्स्टिटयूट, बडौदा, १९६१
तिवारी भोलानाथ : हिंदी भाषा,
किताब महल, इलाहाबाद, १९७२
तुळपुळे शं. गो. : लीळा चरित्र पूर्वार्ध–भाग २,
सुविचार प्रकाशन मंडळ, नागपूर, १९६६
तुळपुळे शं. गो. : लीळा चरित्र उत्तरार्ध–भाग १,
सुविचार प्रकाशन मंडळ, नागपूर, १९६७
तुळपुळे शं. गो. : पांच संत कवि,
व्हीनस प्रकाशन, पूना, १९५९

सूची-कार्य के लिए आबासाहेब गरवारे महाविद्यालय के ग्रंथालय की सहायक ग्रंथपाल सुश्री शशिकला भागवत ने सहायता की है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

'महाराष्ट्र के नाथपंथीय कवियों का हिंदी काव्य'

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.

जवाहर पुस्तकालय, मथुरा

डॉ. अशोक कामत ने बहुत मनोयोगपूर्वक महाराष्ट्र के नाथपंथी कवियों के हिंदी काव्य पर अपना शोध करके शोधोपाधि प्राप्त की है। इसके द्वारा अनेक अज्ञात पक्ष उभरकर सामने आये हैं। मेरा विश्वास है कि इससे प्रेरित होकर शोधार्थी अन्य प्रदेशों में छितराए हुए इस प्रकार के हिंदी काव्य का अनुसंधान करने में प्रवृत्त होंगे। इस प्रबंध का समुचित अभिनंदन होगा, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

भूतपूर्व अध्यक्ष,
हिंदी विभाग,
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन।

डॉ. अशोक कामत ने अपने प्रबंध को प्रस्तुत करने में जो श्रम उठाया है उसे यथासंभव सप्रमाण बनाने के लिए जितनी सतर्कता बरती हैं, वह श्लाघ्य है। यह संभव है कि आपके सभी निष्कर्षों से सभी सहमत न हों। शोध के लिए तो हमेशा ही संशोधन और पुनर्विचार की आवश्यकता पड़ती ही है। परंतु आपने जो भी कहा है, उसे तर्कसम्मत सिद्ध करने का अवश्य प्रयास किया है। महाराष्ट्र के संतों पर नाथ-मत का प्रभाव असंदिग्ध है। आपने उसका अच्छा विश्लेषण किया है। आपका शोध परवर्ती शोधकर्ताओं का मार्गदर्शन करेगा, इसमें मुझे लेषमात्र संदेह नहीं है। आपने महाराष्ट्र में शोध-क्षेत्र में जो कार्य किया है, वह अनुकरणीय है, अभिनंदनीय है।

आचार्य विनय मोहन शर्मा

भूतपूर्व निदेशक, अनुसंधान विभाग,
भोपाल विश्वविद्यालय, भोपाल।

विद्वान शोधकर्ता ने अथक श्रम से संग्रहीत सामग्री का अनुशीलन जिस वैज्ञानिक पद्धति से किया है उससे उसकी आलोचनात्मक प्रतिभा का पता चलता है। ग्रंथ को आद्योपान्त पढ़ने से शोधार्थी की आलोच्य विषय में अगाध निष्ठा एवम् असामान्य गति का संधान मिलता है।

डॉ. भगवती प्रसाद सिंह

आचार्य तथा अध्यक्ष,
हिंदी विभाग,
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर।